भारतीय-ग्रन्थमाला—संख्या १३

नागरिक शिक्षा



लेखक
भारतीय शासन, हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ, नागरिक शास्त्र,
और भावी नागरिकों से, आदि के
रचयिता
भगवानदास केला



प्रकाशक
भारतीय ग्रन्थमाला, दारागंज (इलाहाबाद)



मुद्रक
गयाप्रसाद तिवारी बी. काम., नारायण प्रेस, प्रयाग

ठा संस्करण]   सन् १९४८ ई०   [मूल्य १॥)

नागरिक शिक्षा के संस्करण

पहला संस्करण	१०००	प्रतियाँ	सन्	१६२८
दूसरा ”	१२५०	”	”	१६३२
तीसरा ”	७५०	”	”	१६४१
चौथा ”	७५०	”	”	१६४३
पाँचवाँ ”	१०००	”	”	१६४६
छठा ”	१५००	”	”	१६४८

निवेदन

हर्ष का विषय है कि हम इस पुस्तक का यह छठा संस्करण छपा रहे हैं। इसमें आवश्यक संशोधन कर दिया गया है। तथापि पाठकों को रेल, तार, डाक और बैंकों आदि के नये-से-नये नियमों की जानकारी प्राप्त करते रहना चाहिए।

भारतवर्ष (भारतीय संघ) स्वतंत्र हो गया है। पर अभी हमारी स्वतंत्रता केवल राजनैतिक है। हमें सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक स्वाधीनता प्राप्त करनी है। प्रत्येक व्यक्ति को सुयोग्य नागरिक बनना और अपने कर्तव्य पालन करना है। इस लिए अब नागरिक शिक्षा प्राप्त करने की विशेष आवश्यकता है। यह पुस्तक इसमें सहायक होगी।

यद्यपि यह पुस्तक बहुत सी शिक्षा-संस्थाओं तथा स्कूल पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत है, हमारे साधन परिमित होने के कारण इसका यथेष्ट प्रचार नहीं हो रहा है। प्रचार के लिए अभी बहुत गुंजायश है। नागरिक-शिक्षा-प्रेमी महानुभाव इस ओर ध्यान देने की कृपा करें। अध्यापक महानुभावों से विशेष निवेदन अलग किया गया है।

श्री० जुगलकिशोर जी एम. ए. भूतपूर्व आचार्य प्रेममहाविद्यालय, वृन्दावन, ने इस पुस्तक की शिक्षाप्रद भूमिका लिखने की कृपा की है। इसके लिए आप के हम बहुत कृतज्ञ हैं।

विनीत

भगवानदास केला

भूल-सुधार—पृष्ठ ६५ में पेरेग्राफ का शीर्षक जहाँ 'शिक्षा-कृषि' छपा है, वह 'कृषि-शिक्षा' होना चाहिए। और भी जहाँ कहीं प्रूफ की अशुद्धि मालूम हो, विद्वान पाठक सुधार कर पढ़ें।

अध्यापकों के लिए

अध्यापक महानुभाव इस पुस्तक को यथा-सम्भव मनोरंजक बनावें। वे जिस नागरिक विषय की शिक्षा दें, उसके कुछ स्थानीय दृष्टान्त विद्यार्थियों के सामने रखें और जब अवसर मिले, वे उन्हें राज्य के भिन्न-भिन्न विभागों, संस्थाओं तथा उनके कार्यालय आदि का प्रत्यक्ष ज्ञान कराएँ। जिन बातों को विद्यार्थी अच्छी तरह समझते हों उनके उदाहरण या दृष्टान्त से अज्ञात वस्तुओं का थोड़ा-थोड़ा ज्ञान कराया जाना चाहिए। विद्यार्थियों को समय-समय पर माडल, मेजिक लालटेन की तस्वीरें, तथा अन्य चित्र दिखाए जाने चाहिएँ। साथ ही उन्हें कभी-कभी, कल-कारखानों, नहर या नदी के पुल, रेलवे, स्टेशन, अदालतों, पुलिस चौकी, चुंगी-घर आदि की सैर करने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए; इससे उनके मन में इन विषयों के ज्ञान का अनुराग बढ़ेगा। विद्यार्थियों के मन पर यह बात अच्छी तरह जमा दी जानी चाहिए कि घर में, और बाजार में; स्कूल में और खेलने के मैदान में, रेल में, और मुसाफिरखाने में, हर जगह उचित कर्तव्य पालने और लोक-सेवा करने से ही वे अच्छे नागरिक बन सकते हैं।

अध्यापकों को इन विषयों सम्बन्धी अपना ज्ञान बढ़ाने के लिए आवश्यक साहित्य देखते रहना चाहिए; उनके लिए इस ग्रन्थमाला की (१) भारतीय शासन (२) निर्वाचन पद्धति (३) भावी नागरिकों से (४) हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ (५) देशी राज्य शासन, और (६) अपराध चिकित्सा, पुस्तकें विशेष उपयोगी हैं।

लेखक



स्व० रायबहादुर पण्डित लक्ष्मीचन्दजी केला
जन्म, सन १८४६ ई०, निधन, सन् १९०१ ई०

समर्पण

स्व० रायबहादुर पंडित लक्ष्मीचन्द जी केला,

पूज्य चाचाजी !

एक गाँव (बावैल, तहसील पानीपत) में जन्म लेकर भी आपने हिन्दी, संस्कृत और अंगरेजी पढ़ने में कैसा उत्साह दिखाया ! आप पानीपत में एक मन्दिर में रहते थे, वहाँ से रविवार या अन्य छुट्टी के दिन पैदल घर आते और प्रायः एक सप्ताह का आटा दाल आदि ले जाते, और स्वयं भोजन बनाते थे। इस प्रकार आपने घरवालों को अपनी पढ़ाई के खर्च से प्रायः मुक्त ही रखा। आजकल के बोर्डिङ्ग हाउसों या होस्टलों में रहनेवाले गरीब विद्यार्थियों के लिए यह कितना शिक्षाप्रद है !

आप अपने परिश्रम और अध्यवसाय से उत्तरोत्तर उन्नति करके जल्दी ही नहर के सब-डिविजनल अफसर बन गए। सरकारी मान-प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए आदमी प्रायः अपने स्वाभिमान को तिलांजलि दे देते हैं, और अधिकारियों की खुशामद करके तथा उन्हें डाली भेंट और दावतें आदि देकर जैसे-भी-बने उन्हें खुश करने की फिक्र में रहा करते हैं। पर आप तो अपनी योग्यता और ईमानदारी के ही कारण पंजाब सरकार से पहले 'पंडित' और फिर 'रायबहादुर' पद से सम्मानित हुए। पीछे लायलपुर के जंगलों को उत्तम 'कालोनी' (उपनिवेश) बनाने में आपकी कार्य-कुशलता देखकर सरकार ने आपको बहुमूल्य 'सरोपा' पारितोषिक प्रदान किया। आपका स्वर्गवास हो जाने पर आपके परिवार को सरकार से पाँच मुरब्बे जमीन दी गई, जिसकी वार्षिक आय पहले लगभग पाँच हजार रुपए थी, और पीछे तो बढ़ती ही गई। ये बातें वास्तव में सत्पुरुषों की ईर्ष्या के योग्य और सिद्धान्तहीन हाँ-हजूरों के लिए उपदेशपूर्ण हैं।

इतने धन और मान वाले होकर भी आपने जैसी सादगी, सरलता, लोकसेवा आदि का व्यवहार किया, वह प्रत्येक नागरिक के लिए अनुकरणीय है। जहाँ बड़े--ड़े अफसर आप का नाम लेने में सकुचाते और 'रायबहादुर साहब' और 'पंडित जी' ही कहते, वहाँ गाव के आदमी आप को 'अरे लखमा' कहकर सम्बोधन करते और आप भी उन्हें 'चाचा', या 'काका' आदि कहकर पुकारते। जो कोई आप के पास सहायता पाने के लिए जाता, निराश होकर न लौटता। आप अपने प्रेम और सत्कार से लोगों को कृष्ण-सुदामा-मिलन की याद दिलाते थे। आप किसी की कुछ मदद करते तो वह प्रायः गुप्त ही रहती थी। आप के कितने ही सत्कार्यों की बात, घरवालों को भी आप का स्वर्गवास होने के बाद मालूम हुई है।

फैशन या शौकीनी आप को छू नहीं पाई। आप की पोशाक सिर पर दुपट्टा (साफा), बदन में कुर्ता और बन्द कालर वाला कोट, और चुस्त (चूड़ीदार) पाजामा, तथा पावों में देशी जूते होते थे। आप चश्मा लगाते थे तो सिर्फ इस वास्ते कि आप को उसकी ज़रूरत होती थी; इसलिए आप उसकी कमानी बढ़िया नहीं रखते थे, जैसे कि अनेक युवक दिखावे के लिए रखा करते हैं।

परमात्मा करे, इस देश का प्रत्येक निवासी आप की तरह अपने विविध कर्तव्यों का समुचित रूप से पालन करे, और सुयोग्य नागरिक बने।

विनीत

वरन् इससे उसे अपने विद्यालय के प्रबन्ध तथा उसकी कठिनाइयों का ज्ञान होने में प्रत्यक्ष सहायता मिलती है। इससे उसे यह विचार होता है कि उसके, अपने विद्यालय तथा अपनी कक्षा के प्रति, क्या-क्या कर्त्तव्य हैं, और वह अपनी कक्षा के अनुशासन और नियन्त्रण रखने में भी सहायक हो जाता है।

बहुत से नवयुवक ऐसे हैं, जिन्हें. बी. ए., और एम. ए. की उपाधि धारण करने पर भी, म्युनिसपैलटियों के संगठन और उनके कार्यों तक का भी ज्ञान नहीं होता। उनका अज्ञान और उदासीनता इस शिक्षा-पद्धति का प्रत्यक्ष फल है, जिसमें उन्हें न केवल इस विषय के ज्ञान का अवसर नहीं दिया गया, वरन् नवयुवकों के नागरिकता के भावों की वृद्धि करने का प्रत्येक प्रयत्न रोका गया है। राष्ट्रीय और नागरिक विषयों में नवयुवकों की उदासीनता आश्चर्यजनक और दुःखदायी है। इसका उपाय यही है कि नागरिक शिक्षा का विषय अनिवार्य कर दिया जाय, तथा व्यक्ति और समाज का अन्योन्य आश्रयिता की ओर भली भाँति ध्यान दिलाया जाय। समाज की उन्नति व्यक्तियों के बुद्धिमत्तापूर्वक किए हुए प्रयत्नों तथा स्वार्थत्यागों पर निर्भर है, और व्यक्ति की उन्नति तभी है जब कि समाज अच्छी, विकारहीन स्थिति में हो। यदि शिक्षा मनुष्य को ऐसा उपयोगी नागरिक बनाने में विफल होती है कि वह अपने व्यक्तिगत हित को नगर और देश के बड़े हित के सम्मुख गौण समझे, तो यही नहीं, कि उस शिक्षा का उद्देश्य नष्ट हो जाता है, वरन् वह, शिक्षा के अभाव से भी अधिक, भयकर सिद्ध होती है। अध्यापक का उत्तरदायित्व महान है। यह उसका काम है कि वह अपने शिष्यों के लिए इस विषय को मनोरंजक बनाए।

विद्यार्थियों को नागरिकता का विचार कर्त्तव्यों और अधिकारों के सूक्ष्म सिद्धान्तों के वर्णन मात्र से नहीं दिया जा सकता; इसके लिए परिवार और विद्यालय के जीवन के स्थूल उदाहरणों की आवश्यकता है। परिवार और विद्यालय के जीवन में नगर और राज्य के जीवन सम्बन्धी बहुत से अच्छे दृष्टान्त मिलते हैं, और उनके, उदाहरणों से विद्यार्थी नगर और राज्य के जीवन की वास्तविकता अच्छी तरह समझ सकते हैं। नागरिकता के उत्तरदायित्व को अच्छी तरह समझ लेने से विद्यार्थियों के नैतिक भावों की वृद्धि होती है, और इससे वे विद्यालय व सामूहिक कार्यों में अधिक दिलचस्पी से भाग ले सकते हैं।

इस प्रकार नागरिक शिक्षा से व्यक्तियों की सामाजिक और नैतिक चेतनता का विकास होता है, यही सब शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है। इस पुस्तक में इस विषय का ऐसी सुगमता से वर्णन किया गया है कि यह औसत दर्जे के विद्यालय के विद्यार्थियों की समझ में आसानी से आ जाय। [illegible] इसका लेखक डिस्ट्रिक्ट [illegible] के धन्यवाद का आभारी है, जिनका शिक्षा-कार्य उसने [illegible] दिया है।

विषय-सूची

—०—

पहला पाठ

विषय-प्रवेश



मनुष्य आपस में मिलकर रहते हैं—पाठको ! तुममें से कोई अकेला नही रहता, तुम सब अपने-अपने घर में अपने माता-पिता आदि के पास, किसी गाँव या नगर मे रहते हो। अगर तुममे से कोई अकेला रहने लगे तो पहले तो सुनसान जगह में उसका जी ही नही लगेगा, और जगली जानवरों से भय मालूम होगा; फिर, वहाँ उसका निर्वाह भी तो नहीं हो सकता। उसे खाने-पहनने के लिए भोजन-वस्त्र चाहिए; सर्दी. गर्मी, और वर्षा से बचने के लिए मकान चाहिए। कोई आदमी इन तरह-तरह की आवश्यकताओ को अकेला ही पूरा नही कर सकता। इन्हे पूरा करने के लिए, आदमी को दूसरों की सहायता की जरूरत होती है। यही कारण है कि प्रायः मनुष्य अकेला नही रहता। हर आदमी दूसरो से मिलकर रहना चाहता है।

समाज मे मिलकर रहने से मनुष्यो को एक दूसरे के विचार मालूम होते हैं। इससे उन्हे अपनी उन्नति करने में सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त, उनमें सेवा. प्रेम और सहानुभूति आदि गुणो की वृद्धि होती है। बडे (बुजुर्ग) लोग स्वयं कष्ट

उठाकर भी छोटों की भलाई के काम करते हैं। छोटे, बड़ो की आज्ञा में रहते है। सब एक दूसरे के दुख-सुख मे साथ देते हैं। इसलिए हम सब मिलकर समाज में रहते हैं।

हम सब एक समाज के अंग हैं—हमें यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि हम सब एक समाज के अग है, समाज हमसे बना है; और, हमारा आपस में इस प्रकार सम्बन्ध है कि एक को कष्ट पहुँचने से दूसरों को भी कष्ट पहुँचता है, और एक के पिछड़े हुए होने की दशा में दूसरो की यथेष्ट उन्नति नही हो सकती। असल में समाज को मनुष्य के शरीर से उपमा दी जा सकती है। जिस प्रकार हाथ, पाँव, नाक, कान आदि एक ही मनुष्य-शरीर के अंग हैं, उसी प्रकार प्रत्येक आदमी, पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या वृद्ध, सब अपने-अपने समाज के अग हैं; चाहे वे जुदा-जुदा कार्य करते हो, भिन्न-भिन्न प्रकार की शिक्षा पाये हुए हों, और चाहे ये अलग अलग धर्मों को माननेवाले ही क्यो न हो। जिस प्रकार पाँव की एक अगुली मे काँटा लग जाने से शरीर के सब अंग उसकी पीड़ा का अनुभव करते हैं, और यथा-शक्ति उस पीड़ा का निवारण करने मे सहायक होते हैं, उसी प्रकार समाज के एक आदमी को पीड़ा होने की अवस्था में दूसरे मनुष्यो को उस कष्ट का अनुभव करके उसे दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

हम देखते है कि मनुष्य के भोजन करने से उसके सभी अगो की पुष्टि होती है। यदि हाथ, पाँव और मुँह, यह सोचकर कि इस कार्य से तो अकेले पेट की ज़रूरत पूरी होती है, आपस

में सहयोग करना छोड़दें तो इससे सबकी ही हानि होगी। ठीक इसी तरह हरेक मनुष्य की उन्नति से समाज की उन्नति में सहायता मिलती है; समाज के भिन्न-भिन्न अंगों का अपने अलग-अलग स्वार्थ का विचार करना अनुचित है।

समाज के हित में हमारा हित है—पाठको ! ज़रा विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जायगी कि यदि हम अपनी भलाई या कल्याण चाहते हैं तो हमें समाज के दूसरे अंगों के हित का समुचित ध्यान रखना चाहिए। तुम जानते होगे कि जब हमारे पास पड़ोस के किसी स्थान में प्लेग आदि बीमारी फैल जाती है तो उसका हमारे यहाँ आना कितना सहज है। यदि हम चाहते हैं कि हम स्वस्थ या तन्दुरुस्त रहें तो केवल इतना काफी नहीं है कि हम अपने घर को साफ सुथरा रखें, यह भी आवश्यक है कि हम अपने ग्राम और नगर-निवासियों में स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों का प्रचार करें

समाज के कार्य में प्रत्येक मनुष्य को सहायक होना चाहिए—बहुत से आदमी सोचते हैं कि हम तो गरीब हैं, हमे अपना ही निर्वाह करना कठिन हैं, हम दूसरो की भलाई क्या कर सकते है। पाठको! यह विचार ठीक नही है। प्रत्येक मनुष्य, वह कैसी ही अवस्था में हो, यदि चाहे तो, दूसरों की थोड़ी बहुत सहायता अवश्य कर सकता है। कल्पना करो कि कोई आदमी किसी रोग मे व्याकुल है, वह बहुत घबरा रहा है। उसे एक आदमी दवाई के लिए पैसे दे देता है, दूसरा उसके लिए उन पैसों की दवाई ला देता है, तीसरा उसके पास बैठकर अपनी बातो से उसे धीरज बधाता है। इनसब सज्जनो के सहयोग से उसे आराम हो जाता है। इस दशा मे यह स्पष्ट है कि पैसे-वाला पैसे से जो सहायता कर सकता है, उसकी अपेक्षा वह सहायता कुछ कम महत्व की नहीं है, जो दूसरा आदमी सेवा करके, या अच्छी बातों द्वारा कर सकता है। अस्तु, तन से, मन से, या धन से, जैसा अवसर हो, जैसी स्थिति हो, हमे समाज के हित-साधन से पीछे न हटना चाहिए।

दूसरा पाठ

नागरिक जीवन

एक विचार करने योग्य घटना—एक साधारण घटना है, पर है बहुत विचार करने की! स्वयंसेवकों की एक टोली

रवाना हो रही थी, उसमें पैंतीस-चालीस सज्जन थे; कुछ साधारण शिक्षित, कुछ, उच्च शिक्षा पाये हुए। सभी मे विचार शक्ति थी, भले-बुरे का ज्ञान था, देश-सेवा की विलक्षण उमंग थी। उत्साह उनके चेहरे से टपका पड़ता था। मातृभूमि का झण्डा ऊँचा करने के खातिर वे यातनाओ को निमन्त्रण दे चुके थे। वे जुदा-जुदा स्थानों से आकर यहाँ इकट्ठे हुए थे। कुछ गांववाले थे; और कुछ कस्बों तथा शहर के भी। प्रात:काल वे नगर से विदा होने लगे। नगर-निवासी बाल-वृद्ध उनके दर्शन के लिए बड़े सवेरे से जाग उठे थे; जगह-जगह उनके स्वागत-सत्कार का प्रबन्ध था, उनसे थोड़ी-थोड़ी दूर पर फूलमालाओं और शर्बत के कुल्हड़ लेने के लिए आग्रह किया जा रहा था। स्वयंसेवक फूलमालाएँ अपने गले मे धारण करते थे, और शर्बत पी लेते थे। कुल्हड़ो का वे क्या करें? उन्हें वे फेंकते ही। पर इस फेंकने ने बतला दिया कि ये स्वयंसेवक चाहे जितने गुणो वाले हों—और उनके त्याग, साहस और कष्ट-सहिष्णुता को प्रशंसा कौन न करेगा—उन्होने नागरिक शिक्षा नही पायी थी। कुछ ने तो इन कुल्हड़ों को उसी स्थान पर डाल दिया जहाँ वे खड़े थे, और कुछ ने अपनी क़तार से तनिक बचा कर—परन्तु सड़क पर ही—डाल दिया; वहाँ से उनके टुकड़े दूसरो के पाँव में चुभ सकते थे।

यह कार्य नागरिकता के विरुद्ध था। पर इसके खिलाफ आवाज कौन उठाये! हम सभी तो ऐसे कार्य करने के आदी होगये है। फिर, उस समय इस नागरिक नियम-भंग के

अपराधी वे लोग थे, जो राष्ट्र की स्वतन्त्रता और मानरक्षा के लिए, मानो, बलिदान होने के लिए जा रहे थे। दूसरे नागरिको को उनका आदर करना ही चाहिए था। पर वे भूल गये कि उनकी भी गलती तो आखिर गलती ही है और उसका सुधार किया जाना आवश्यक है। अन्त में टोली के नायक ने स्वयंसेवको का ध्यान इस ओर दिलाया; फिर तो दूसरे नागरिको ने उनके हाथ से कुल्हड़ ले लेने का प्रबन्ध कर दिया जिससे उन्हे फेंकने की जरूरत ही न रहे।

नागरिक जीवन की अन्य बातें—ऊपर सड़क के दुरुपयोग का एक उदाहरण दिया गया है, ऐसे अनेक उदाहरण प्रति दिन हमारे सामने आते हैं। हम बाजार मे संतरे, केले, मूँगफली आदि खाते है, तो छिलके चाहे जहां डालते रहते हैं। चलते हुए हम, जहां इच्छा होती है, थूकते रहते हैं। हम मकान मे ऊपर की मञ्जिल मे रहते हैं तो जब चाहा सड़क पर मैला पानी, कूड़ा-कचरा डाल देते हैं। भारत जैसे निर्धन देश मे जहां अधिकांश आदमियो के पांवों में जूतियां नहींहोती,इन बातों की ओर ध्यान देने की और भी अधिक आवश्यकता है। केले के छिलको पर तो आदमियों के पांव फिसलने से कई बार बड़ी दुर्घटनाएँ हो चुकी हैं, पर हम इससे शिक्षा कब लेते है। क्या कभी हम यह सोचने का कष्ट उठाते हैं कि यदि स्वयं हम पांव फिसलने से गिर जायँ, अथवा नंगे पांव होने की दशा मे हमारे पांव में ककर चुभ जाय या वह थूक में भर जाय या हमारे शरीर पर मैले पानी के छींटे पड़ जायँ तो हमे कैसा

लगेगा ? जो बाते हमे बुरी लगती हैं वह हम दूसरो के लिए क्यो करते है ! दूसरो को वे बातें बुरी लगती हैं ; यह हम भली भांति जानते है, पर यह जानते हुए भी अपने व्यवहार में इसे भूल जाते हैं।

इस पाठ में हम थोड़ी सी उन बातों की चर्चा करेंगे, जिनका सम्बन्ध हमारे रोजमर्रा के जीवन से है। ये बहुत मामूली मालूम होने पर भी इतने महत्व की हैं, कि यदि नागरिक इन पर अच्छी तरह ध्यान दें, और ठीक व्यवहार करें तो हमारा नागरिक जीवन कही अधिक सुखमय हो जाय।

नागरिकता का मूल मंत्र—नागरिक जीवन सम्बन्धी ध्यान रखने योग्य मूल बात यह है कि हम अपने बात-व्यवहार मे अपनी दृष्टि केवल अपने स्वार्थ या सुविधा की ओर न रखें, वरन् दूसरो के हित की ओर भी रखें। हमारा कोई कार्य ऐसा न हो, जिससे दूसरो को हानि या कष्ट पहुँचे हम दूसरो से ऐसा वर्ताव करें, जैसा हम चाहते है कि दूसरे हमसे करें।

पिछले पाठ मे यह बताया जा चुका है कि किसी मनुष्य का जीवन समाज के दूसरे आदमियो के जीवन से जुदा या स्वतन्त्र नहीं है। प्रत्येक मनुष्य का अनेक मनुष्यो से—अपने परिवारवालो से, अपने ग्राम और नगरवालो से, अपने प्रान्त या राज्यवालो से तथा अपने राज्य के बाहर भी बहुत से आदमियो से—सम्बन्ध होता है। एक के सुख-दुख, रोग. शोक और हानि-लाभ का परिणाम उसी व्यक्ति तक परिमित नही रहता; दूसरे भी बहुत-से आदमियो को भोगना पड़ता है। प्रत्येक समाज के

मनुष्य मानो एक ज़ंजीर या शृङ्खला में बँधे हुए हैं; एक कड़ी के खराब हो जाने पर वह सारी जंजीर कमजोर हो जायगी, जिसका एक अंग हम भी है। अपने पड़ोसियों के बीमार रहते हुए, हमारा रोग के कीटाणुओं से सुरक्षित रहने की बात सोचना मूर्खता और शेखचिल्लीपन ही है।

नागरिकता का व्यवहार—इन बातों में कुछ नवीनता नही है। ये बातें समय समय पर अनेक विद्वानो और आचार्यों ने कही हैं। हम पुस्तको मे पढ़ते हैं, व्याख्यानो में सुनते है: और समाचारपत्रो द्वारा भी इनका ज्ञान प्राप्त करते हैं। परन्तु इतना होते हुए भी बहुत कम आदमी इनके अनुसार व्यवहार करते पाये जाते हैं। अनेक बार शिक्षित और समझदार आदमी भी इस विषय में दोषी मिलते हैं। हाँ, यह बात अवश्य है कि क्योकि नागरिकता के नियमो की अवहेलना अधिकांश आदमी करते हैं, आम तौर से कोई किसी को टोकने या उसकी आलोचना करने का साहस नही करता। जो हो, आदमी नागरिक नियमो का पालन बहुत कम करते हैं।

बस्ती अर्थात् नगर या गाँव में—ये बातें कुछ उदाहरणो से ध्यान में आजायँगी। गाँव की तो बात ही क्या, नगरों का विचार कीजिए, जहाँ आदमियों से. अधिक शिक्षित होने के कारण, अधिक समझदारी की आशा की जाती है। म्युनिसपेलटी या सफाई कमेटी इस बात का प्रबन्ध करती है कि नालियां तथा सड़कें साफ रहें और नगर का स्वास्थ्य अच्छा रहे। परन्तु जब तक इसमें नागरिको का यथेष्ट सहयोग न हो,

होते हैं जहां के आदमियों का हम विशेष लिहाज नहीं करते। रेल के डिब्बे का रोजमर्रा का अनुभव क्या बतलाता है! कितने ही आदमी खाना खाकर जूठन तथा पत्ते अपनी सीट (बैठने की जगह) के नीचे ही डाल देते हैं. मूँगफली या संतरे खानेवाले. छिलके बाहर नहीं फेंकते। गन्ना चूसनेवाले भी उसके छिलके बाहर फेंकने का कष्ट नहीं उठाते। तमाखू पीने या खाने वाले अपनी सीट के पास ही थूकते हुए नहीं लजाते। कहां तक गिनावें! कभी-कभी तो इन लोगों की ऐसी आदतों के कारण किसी भले आदमी के लिये गाड़ी में बैठना कठिन हो जाता है, पर वे ज़रा भी नहीं सोचते कि उनके ऐसे व्यवहार से, उनकी थोड़ी सी आरामतलबी से, दूसरे आदमियों को कितनी असुविधा होती है। वे अपनी यात्रा पूरी करके गाड़ी से उतर जाते हैं, दूसरो के दुःख से उन्हें क्या मतलब!

मुसाफिरखानों और धर्मशालाओ में.जगह जगह व्यवहारिक नागरिकता में हमारी गल्तियो के उदाहरण मिलते हैं। इन स्थानो में प्राय: सवेरे और तीसरे पहर दो बार सफाई होती है. और इन्हे गन्दा करने का काम तो दिन भर, और हां. प्राय. रात को भी चलता रहता है। जो यात्री दोपहर को या रात में इन स्थानों में ठहरते हैं. उन्हे बहुधा परेशान होना पड़ता है; सिवाय उन थोड़े से स्थानों के जहां हर घड़ी सफाई करने के लिये खास तौर से आदमी मुकर्रर रहता है।

बाजार के काम में—नागरिकता की भावना के अभाव ने बाजार से चीज लाने या बेचने को एक बड़ी 'कला'

बना रखा है। चीज बेचनेवाला चाहता है कि उसकी वस्तु घटिया होने पर भी ग्राहकों को अच्छी दिखाई दे, वह उनकी आंखों में धूल झोंकने के सब प्रकार के प्रयत्न करता है, और अधिक-से-अधिक दाम लेने की घात में रहता है। जितना वह ग्राहकों को अधिक ठग सकता है, उतना ही वह अपने आपको अधिक कुशल या होशियार समझता है। कभी-कभी ग्राहक भी अपना खोटा सिक्का दुकानदार के गले मढ़ आता है, अथवा दुकानदार को धोखा देकर कुछ कम पैसे दे आने में सफल हो जाता है। सार बात यह है कि न ग्राहक को यह विश्वास होता है कि

उन्हे चाहिए कि अपनी बोलचाल और व्यवहार से, अपने प्रत्येक कार्य से नागरिकता को शिक्षा दें। खासकर छोटे बालकों में अनुकरण या नकल करने की रुचि बहुत अधिक होती है, उन पर अपने माता पिता और अध्यापकों की बातो की अपेक्षा उनके कार्यों का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। आशा है, अपनी सन्तान का हित चाहनेवाले माता-पिता तथा अपने विद्यार्थियो की उन्नति चाहनेवाले, अध्यापक इस ओर समुचित ध्यान देंगे।



तीसरा पाठ

राज्य और नागरिक



पाठको। तुम परिवार की बात जानते हो। पिता परिवार का पालन-पोषण करने के लिये जरूरी चीजें लाता है, माता घर का प्रबन्ध करती है। बड़े लड़के लड़कियां उन्हें उनके कार्य में यथा-शक्ति सहायता देती हैं। सब के कर्तव्य-पालन तथा सहयोग से परिवार का सुख बढ़ता है। जिस परिवार के आदमी आपस मे लड़ते झगड़ते हैं, अपना कर्तव्य पालन नही करते, वह परिवार बहुत दुखी रहता है, और पड़ोस में उसकी बड़ी निन्दा होती है, इसलिए परिवार के सब आदमियो को परिवार के प्रति अपने कर्तव्यो का पालन करना चाहिए।

इसी तरह तुम जानते हो कि क्रिकेट या फुटबाल के खेल में एक कप्तान (केप्टेन) होता है। उसे, खेलनेवाले इसलिए चुनते और कुछ अधिकार सौंपते हैं कि वह खेल का ठीक ठीक प्रबन्ध करे और किसी को नियम विरुद्ध कार्य न करने दे।

जिस प्रकार परिवार में परिवार के, और खेल में खेल के, नियम पालन करने की आवश्यकता है, उसी प्रकार ग्राम या नगर, तहसील, तालुका जिला या प्रान्त में इन इन स्थानों के नियम पालन किये जाने चाहिए; तभी देश में सुख शान्ति और उन्नति हो सकती है। परन्तु बहुधा आदमी इस बात को भूल जाते हैं।

सरकार की आवश्यकता—जिस प्रकार माता पिता की अनुपस्थिति या गैरहाजिरी में छोटे बालकों का, और कप्तान की अनुपस्थिति में खेलनेवालों का कभी-कभी झगड़ा हो जाता है, इसी प्रकार गांव या नगर आदि में जब कोई नियम-पालन कराने वाला न हो, कुछ आदमी नियम भंग करने लगते हैं। यद्यपि अधिकतर मनुष्य शान्ति-प्रिय होते हैं, और अपनी इच्छा से ही सब काम नियमपूर्वक करते हैं, तथापि कुछ आदमियों

इसलिए भी होती है कि जिन कामो को आदमी अलग अलग न कर सकें, उनको वह सब की ओर से कराती रहे, वह सब की उन्नति में सहायक हो। इस संस्था को सरकार या 'गवर्मेंट' कहते हैं।

साधारण बोलचाल में जिसे कुछ अधिकार या शक्ति हो, उसे ही सरकार कह देते हैं। बहुत से नौकर अपने मालिक को सरकार कहा करते हैं। परन्तु असल में सरकार उन आदमियो का समूह है, जो देश या उसके किसी भाग में सुख-शान्ति का प्रबन्ध करे और उस की, बाहर के शत्रुओ से, रक्षा करे।

भारतवर्ष (भारतीय संघ) की सरकार को 'भारत सरकार' कहते हैं, और, इस के एक-एक प्रान्तकी सरकार यहाँ की प्रान्तीय सरकार कहलाती है। इसके विषय मे विशेष बातें तुम हमारी दूसरी पुस्तक 'भारतीय शासन' मे पढ़ोगे। यहाँ, यह बताया जाता है कि सरकार किस-किस प्रकार के कार्य किया करती है।

सरकार के कार्य—कानून बनाने के अतिरिक्त, कुछ कार्य तो ऐसे होते हैं, जो प्रत्येक देश की सरकार को करने होते हैं। यदि ये कार्य न किये जायँ तो आदमी अपना रोजमर्रा का साधारण कार्य-व्यवहार न चला सकें, उनका जीवन संकटमय हो जाय। ऐसे कार्यों को हम सरकार के शान्ति रखने के कार्य कह सकते हैं। ये कार्य नीचे लिखे हैं:—

(१) सरकार देश की, बाहर के शत्रुओ से, रक्षा करती है। विदेशों के आक्रमण रोकने के लिये स्थल सेना, जल सेना, तथा

वायु सेना रखी जाती है।

(२) सरकार देश के भीतर शान्ति रखती है; चोर, डाकू आदि से लोगों के जान-माल की रक्षा करती है। इस कार्य के लिए पुलिस रखी जाती है।

(३) पुलिस जिन लोगो को अपराधी समझकर गिरफ्तार करे, अथवा जिनके विरुद्ध कोई अभियोग हो, उनके विषय में सरकार यह निश्चय करती है कि वे वास्तव में अपराधी हैं या नही, यदि वे अपराधी हैं तो उनसे कैसा वर्ताव किया जाना चाहिए या उन्हे क्या दंड दिया जाना चाहिए। यह कार्य न्यायालय करते है। बहुत-से अपराधियो को, दंड देने के लिए कैद किया जाता है। इसके वास्ते जेलों का प्रबन्ध होता है।

कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जो उपयोगी तो होते हैं, परन्तु ऐसे नही होते कि उनके न किये जाने से लोगो का रोजमर्रा का काम ही न चले, या उनकी जान जोखम मे रहे। फिर, जिन देशों के आदमी उन्नत अवस्था में होते हैं, उनमें उन कार्यों को वे स्वयं कर लेते हैं; सरकार को उनके करने की जरूरत नहीं होती। मिसाल के तौर पर लोगो के पत्र-व्यवहार और आमदरफ्त के लिए डाक, तार और रेल आदि का प्रबन्ध करना, शिक्षा के लिए विद्यालय और महाविद्यालय चलाना, व्यापार के वास्ते बैंक खोलना, सड़कें बनाना, तथा रेल, ट्रामवे और मोटर आदि का प्रबन्ध करना, खेती के लिए नहरें और तालाब आदि बनवाना, स्वास्थ्य-रक्षा के लिए नगरो और ग्रामों मे सफाई का इन्तज़ाम करना, तथा अस्पताल और दवाखाने खोलना, आदि।

राज्य की उन्नति—तुम जानते हो कि कोई गाड़ी तभी अच्छी तरह चलती है, जब उसके दोनों पहिये बराबर मज़बूत और खूब चलनेवाले हो। राज्य भी एक प्रकार की गाड़ी है, जिसके दो पहिये सरकार और नागरिक हैं। राज्य की उन्नति के लिए आवश्यक है कि दोनो ही अपने-अपने कर्तव्यों का उचित रीति से पालन किया करें। जिस प्रकार सरकार का कर्तव्य है कि नागरिको की सब प्रकार से उन्नति तथा रक्षा करे, उसी तरह नागरिको को भी चाहिए कि सरकार के नियमो (क़ानूनो) का पालन किया करें, तथा आवश्यकतानुसार उसकी सहायता करते रहे। नागरिको को यह जानना चाहिए कि सरकार द्वारा उनके देश में क्या-क्या कार्य होते हैं, तभी वे बड़े होकर उनमें सहायक हो सकते हैं, तथा, जरूरत होने पर, उचित सुधार भी कर सकते हैं। अगले पाठों में इन बातों का कुछ खुलासा विचार किया जायगा।

चौथा पाठ

सेना

पाठको! पिछले पाठ मे तुम यह पढ़ चुके हो कि सरकार का एक कार्य, विदेशियों की चढ़ाई से, देश की रक्षा करना है। क्या ही अच्छा हो, यदि कोई राज्य किसी दूसरे पर आक्रमण

न करे, और सब राज्य आपस मे प्रेम-भाव रखें। परन्तु वर्तमान अवस्था मे प्राय: हर एक राज्य को दूसरों के आक्रमण का भय रहता है। दूसरों से अपनी रक्षा करने के लिए, प्रत्येक देश में कुछ आदमी ऐसे रखे जाते हैं जो युद्ध विद्या मे निपुण हो, जिन्होंने तलवार, बन्दूक या तोप चलाना आदि सीख लिया हो। इन आदमियो के समूह को सेना कहते है।

सेना के भेद—दूसरे देशो की तरह भारतवर्ष में भी प्राचीन काल मे लड़ाइयाँ भूमि या स्थल पर होती थी, और उनमे (स्थल-सेना के) पैदल या घुड़सवार सिपाही भाग लेते थे। परन्तु अब समुद्र पर भी लड़ाइयाँ होती हैं, इन लड़ाइयो में जल-सेना काम करती है। जलसेना में लड़ाकू जहाज, पनडुब्बियाँ तथा उन पर रहनेवाले सिपाही होते हैं। इसके अतिरिक्त, विज्ञान की उन्नति हो जाने पर, अब आकाश से हवाई जहाजों द्वारा बम के गोले बरसाये जा सकते हैं। इसके लिए सरकार वायु-सेना के आदमी तथा सामान रखती है। इस प्रकार आजकल सेना तीन प्रकार की होती है:—(१) स्थल-सेना, (२) जल-सेना और (३) वायु-सेना।

स्थल-सेना—पहले सेना कहने से स्थल-सेना ही समझी जाती थी। इस समय भी इसी का महत्व विशेष है। प्राचीन समय मे यही सेना 'चतुरंगिणी' होती थी, अर्थात् उसके चार अंग होते थे—पैदल सिपाही, घुड़सवार (रिसाला), रथ और हाथी। तुमने सुना ही होगा कि महाभारत की लड़ाई में पांडवों की सेना का प्रधान व्यक्ति अर्जुन रथ पर सवार था, जिसे

श्रीकृष्णजी ने हाँका था। इसी प्रकार तुमने पढ़ा होगा कि पोरस और सिकन्दर की लड़ाई के समय यहाँ सेना मे हाथियो का कैसा महत्वपूर्ण भाग था। आधुनिक काल मे सेना में रथ और हाथी नही होते। हाँ, अब दो नये अंग और रहने लगे है, तोपखाना और सपरमेना। 'सपरमेना' मे इंजिनियर और ओवरसियर आदि होते हैं, जो आगे जाकर सेना के लिए पुल, सड़क आदि बनाते हैं।

सारी सेना भारत-सरकार की निगरानी मे रहती है। प्रधान सेनापति को जंगी लाट या कमांडरन चीफ कहते हैं। स्थल सेना का मुख्य भाग हर समय, स्थायी रूप से, लड़ाई के लिए तैयार रहता है। यह भारतवर्ष की सीमा पर रहता है। इसे 'रेग्यूलर सेना' कहते हैं। पहले शान्ति-काल मे इसके सिपाहियो और अफसरो मे आम तौर पर लगभग ढाई लाख आदमी होते थे। ऊँचे अफसर प्राय: सब ही अंगरेज़ होते थे।

स्थल सेना मे रेग्यूलर या स्थाई सेना के अलावा कुछ सहायक या 'आग्ज़ीलियरी' सेना होती है। इसके तीन भेद हैं :—
१—कुछ सेना ऐसी होती है. जो देश के बाहर नही भेजी जाती, यहाँ ही लड़ती है। इसे मुल्की या 'टेरीटोरियल' सेना कहते है। इसी सेना मे भिन्न-भिन्न विश्वविद्यालयो की 'यूनिवर्सिटी ट्रेनिङ्ग कोर' रहती थी; इसमें कालिजो के ऐसे विद्यार्थीऔर प्रोफेसर होते थे, जो सैनिक शिक्षा पाये हुए हो। अब केन्द्रीय सरकार ने राष्ट्रीय सैनिक शिक्षा की व्यवस्था की है। इसके अनुसार सीनियर डिवीजन मे कालिजों के छात्र, और जूनियर डिवीजन

मे स्कूलों के छात्र रहेगे। एक महिला डिवीजन भी रहेगा। प्रान्तीय सरकारें इस योजना को प्रान्तो में लागू कर रही हैं। २—सेना का एक भाग नौकरी किये हुए आदमियो का होता है, जो अपना-अपना निज का काम करते हैं, और आवश्यकता होने पर हथियारबन्द हो जाते हैं। ये प्रायः वन्दरगाहों, रेलो, छावनियो तथा नगरों की रक्षा करते है। इनकी सेना को रिजर्व सेना कहते है। ३—भारतवर्ष की वड़ी-वड़ी रियासतें पहले अंगरेज अफसरो के अधीन कुछ पल्टनें रखती थी। इनमे रियासतों के आदमी भरती किये जाते थे। इस प्रकार की सेना को भारतीय-राज्य-सेना वा 'इंडयन स्टेट्स फोर्सेज़' कहते थे। इसकी वर्तमान स्थिति के विषय मे विशेष आगे लिखा जायगा।

जल-सेना—जल-सेना की शक्ति लड़ाकू जहाजो से जानी जाती है। इसका काम सैनिको, तथा युद्ध केसामान को लाना-लेजाना, हिन्द महासागर में पहरा देना; समुद्री डाकुओ का दमन. वन्दरगाहों की रक्षा और समुद्री नाप-जोख करना है।

वायु-सेना—वायु-सेना की शक्ति का हिसाव वायुयानों (हवाई जहाजों) से लगाया जाता है। इसके संचालक को 'एअर वाइस मार्शल' कहते हैं। हवाई जहाजो पर वैठकर उड़ने की शिक्षा देने के लिए कुछ स्थानो मे 'मिलिटरी फ्लाइंग स्कूल' खोले गये हैं। भारतवर्ष मे वायु सेना का उपयोग अधिकतर पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त में हुआ है।

सेना का कार्य—सेना का मुख्य कार्य देश की बाहर के

आक्रमणकारियों से रक्षा करना है। इसलिए सीमा के स्थानो पर काफी सेना रहती है। आवश्यकतानुसार दूसरे स्थानो से भी सेना वहाँ मँगायी जा सकती है। सीमा की रक्षा के अलावा सेना देश की भीतरी शान्ति के लिए भी काम आती है और इसलिए वह स्थान-स्थान पर छावनियों में रखी जाती है। यों तो शान्ति रखने का कार्य पुलिस का है; परन्तु विशेषदशाओ में, भारी उपद्रव आदि होने पर, सेना की सहायता लीजाती है।

हमारी वर्तमान रक्षा-समस्या—अगस्त १९४७ तक भारतवर्ष ब्रिटिश सरकार के अधीन था, वही इसकी रक्षा के लिए जिम्मेवार थी। उस दशा में भारतीय सेना का उद्देश्य यह था कि वह ब्रिटिश साम्राज्य की सेवा करे और भारतवासियों को स्वाधीन, या दूसरे राज्य के अधीन, न होने देकर इंगलैंड के ही अधीन बनाए रखे। अब भारतवर्ष के स्वतंत्र हो जाने पर इस देश की रक्षा का उत्तरदायित्व यहां की स्वतन्त्र सरकार पर आ गया है।

भारतवर्ष का विभाजन हो जाने से रक्षा की समस्या अब पहले से अधिक जटिल हो गई है। पहले भारतवर्ष की पश्चिमोत्तर सीमा खैबर दर्रा मानी जाती थी। अब जो भारतीय संघ राज्य बना है, उसकी पश्चिमोत्तर सीमा पंजाब के मध्य में (पूर्वी पंजाब के पश्चिम में) आगई है। इसके आगे पाकिस्तान है। वह इतना समर्थ नहीं है कि अगर पश्चिमोत्तर दिशा से रूस का आक्रमण हो तो उसका सामना कर सके; वह इंगलैंड और अमरीका का आसरा तकेगा, और उनकी फौजो को अपने यहां टिकाएगा।

इससे रूस को क्षोभ होना स्वाभाविक है। यदि भारतवर्ष अखंड हो तो रूस इस पर हमला करने का साहस ही न करे।

इस समय रूस और भारतीय संघ की विदेश नीति को देखते हुए भारतीय संघ को रूस के आक्रमण की विशेष आशंका नहीं है। हाँ, पाकिस्तान के बारे में जहाँ-तहाँ शंका है। वह भारतीय संघ के अधिक से अधिक भाग में अपना अधिकार जमाने का स्वप्न देखता है।* उसे अपनी शक्ति का इतना भरोसा नहीं है पर वह भारतीय संघ के पंचमांगी (भीतरी शत्रु) मुसलमानों को अपनी ओर मिलाने की आशा करता है। यह ठीक है कि पिछले दिनों कितने ही मुसलमानों ने राजद्रोह और विश्वासघात का परिचय दिया। परन्तु अब परिस्थिति सुधर रही है, और अगर पाकिस्तान ने उनके भरोसे भारतीय संघ पर हमला किया तो उसे इसका दुष्परिणाम भोगना होगा। तथापि भारतीय संघ को पाकिस्तान के विरुद्ध में सावधान रहना

प्रभुत्व बढ़ा रहा है जिसका राजनैतिक प्रभाव पड़े बिना न रहेगा। अस्तु, स्वतन्त्र भारत को अमरीका की ओर से सावधान रहना तथा दक्षिण पूर्वी समुद्री किनारे की सुरक्षा की व्यवस्था करना होगा।

सैनिक व्यय—हमारी पराधीनता के समय ब्रिटिश सरकार सेना की मद मे खूब खर्च करती थी, उस खर्च का बहुत-सा भाग भारतवर्ष की दृष्टि से अनावश्यक था। उस खर्च से ब्रिटिश साम्राज्य का हित-साधन होता था। साधारण समय मे सैनिक-व्यय चालीस करोड़ से लेकर सत्तर करोड़ रुपए तक किया जाता था। युद्ध काल मे इसकी कोई सीमा नही रही। सन१९४१-४२ मे १०२ करोड़ रुपए खर्च हुआ, उस समय सेना में पाँच लाख से अधिक सैनिक थे। ज्यों-ज्यो लड़ाई बढ़ी, सैनिक व्यय बढ़ता गया; सन् १९४४-४५ मे यह तीन सौ करोड रुपए से अधिक था। यह व्यय-भार असह्य था, पर पराधीनता के कारण लाचारी थी। विभाजन से पहले भारत-सरकार ने अखंड भारत के लिए सेना की मद मे प्रति वर्ष एक सौ दस करोड़ रुपए व्यय करना निश्चय किया था, पर अब विभाजन हो जाने पर केवल भारतीय संघ को ही इससे अधिक व्यय करना होगा. पर स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए अभी यह आवश्यक है।

सेना का राष्ट्रीयकरण—सेना के राष्ट्रीयकरण की बात बहुत समय से चल रही थी, पर ब्रिटिश सरकार ने इस ओर घोर उपेक्षा की। सेना के प्रायः सभी उच्च पदो पर अंगरेजो की ही नियुक्ति की जाती रही, यहाँ तक कि उनकी संख्या ९५ प्रति-

शत तक होती थी। स्वतन्त्र होने पर इस नीति मे अन्तर आया। अप्रेल १९४८ से भारतीय सेना के सभी उच्च पदो पर, जिनमे प्रधान सेनापति पद भी हैं, भारतीय हैं। हाँ, सेना-विशेषज्ञ और सेना-शिक्षक अभी कुछ समय तक अंगरेज रहेगे। आशा है, यह अवधि शीघ्र समाप्त होगी। इस प्रसंग मे यह याद रखना चाहिए कि भारतीय सेना से अगरेज अफसरो को हटा कर उनकी जगह चाहे-जैसे भारतीयो की नियुक्ति करना ठीक नही है। सेना के राष्ट्रीयकरण का असली अर्थ यह है कि सेना मे देशभक्ति के भाव पूर्ण रूप से भरे हो; कोई आदमी राष्ट्रीयता विरोधी न हो। अफसरो की भरती मे यह बात खास तौर से ध्यान मे रखनी है। इसके अलावा हरेक सैनिक को ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए कि वह अपने आपको जनता का आदमी समझे; उसका उद्देश्य जनता की रक्षा करना हो; वह किसी भी दशा मे अपने आपको साधारण भारतीय से ऊँचा न माने, जैसा अगरेजो के शासन-काल मे होता रहा है।

सैनिक पुनर्निमाण सम्बन्धी दूसरा प्रश्न रियासती सेनाओं का है। गत वर्ष २१६ रियासतें तो भारतीय संघ के प्रान्तों में मिल गई हैं, २२ रियासतें केन्द्रीय सरकार के शासन में आ गई हैं, ·६१ रियासतों के सात संघ बन गये हैं। कोई डेढ़ दर्जन रियासतों का ही पृथक् अस्तित्व है, इनमें से भी अधिकांश प्रान्तों या रियासती संघों में शामिल होने वाली हैं। इस प्रकार रिया-[illegible] तथा रियासती संघों की सेना [illegible] [illegible] भारतीय संघ की सेना के अन्दर [illegible]

हैदराबाद को छोड़ कर, भारतीय संघ में सम्मिलित हैं, और हैदराबाद भी जल्दी ही सम्मिलित होकर रहेगा। अस्तु, उपर्युक्त रियासतों या रियासती संघो में जो सेनाएँ हैं, उनका शस्त्रीकरण उसी पद्धति से होना चाहिए जिससे भारतीय संघकी सेना का होता है, जिससे वे सेनाएँ भारतीय संघ के सेनाधिकारियों की निगरानी मे, संघकी सेना के साथ मिलकर, सुचारू रूप से काम कर सकें।

यह भी आवश्यक है कि भारतीय सेना पहले की तरह अपनी आवश्यकताओ के लिए दूसरे देशो के आश्रित न रहे। खेद है कि सन् १९४८ मे भी भारतवर्ष आधुनिक प्रकार के अधिकांश जहाज स्वयं न बना कर खरीद रहा है। यही बात वायुसेना तथा स्थल सेना के यन्त्रीकरण के साधनो पर लागू होती है। हममे नये ढङ्ग की सैनिक सामग्री बनाने की यथेष्ट क्षमता होनी चाहिए।

कुछ सज्जनो का मत है, और बहुतो की इच्छा है कि भारत अब आजाद हो गया है; इसमे न फौज हो, न हथियार; हाँ, लोक-सेवा के लिए अपने प्राण न्यौछावर करने के उत्सुक वीर सत्याग्रही दलों का यथेष्ठ संगठन हो। ऐसा समय कब आएगा ?

पाँचवाँ पाठ

पुलिस

पाठको! पिछले पाठ मे तुम यह पढ़ चुके हो कि देश को बाहर के शत्रुओ से बचाने के लिए सेना रखी जाती है। अब,

इस पाठ मे हम तुम्हे यह बतलायेंगे कि देश के भीतर लोगो की जान-माल की रक्षा करने के लिए क्या प्रबन्ध किया जाता है। तुम अधिकतर देश के भीतर ही रहते हो, सीमा पर नहीं। इसलिए देश की भीतरी शान्ति के सम्बन्ध मे कुछ बातें तुम स्वयं जानते होगे। तुम नित्य शहरो मे और गाँवो मे पुलिस के आदमियो का गश्त लगाते और पहरा देते हुए देखते हो, पुलिस के इन कामो का उद्देश्य यह होता है कि देश के अन्दर शान्ति रहे, चोर-डाकू उपद्रव न मचावें, अपराधियों की खोज की जाय, और उन्हे न्यायालय पहुँचाया जाय।

पहले यहाँ प्रत्येक गाँव या शहर के आदमी अपनी रक्षा का प्रबन्ध स्वय करते थे। वे शहरो में कोतवाल, तथा गाँवों मे चौकीदार और नम्बरदार रखा करते थे। उन्हे पैदावार का कुछ भाग दिया जाता था। अगरेज़ों की अमलदारी मे यहाँ वेतन पानेवाली पुलिस रखी जाने लगी।

साधारण पुलिस—खाकी (या नीली) वर्दी और लाल साफेवाले पुलिस के सिपाही को तुम जानते ही हो। ज़िले मे पुलिस दो तरह की होती है, एक के पास हथियार होते हैं, दूसरी के पास नही होते। हथियारबन्द अर्थात् सशस्त्र पुलिस का काम सरकारी खज़ानो का पहरा देना, कैदियों के साथ जाना, और डाकुओ के दल पर चढ़ाई करना है। उसे फौज़ी ढङ्ग पर कवायद करना और गोली चलाना सिखाया जाता है। अशस्त्र पुलिस सरकारी जुर्माना वसूल करती है, सड़को पर भीड़ न होने देने का प्रबन्ध करती है, आवारा कुत्तो को मारती

है, और अपराधियो को पकड़ती है। अपराधों को रोकने के लिए पुलिस पुराने अपराधियों पर दृष्टि रखती है। थानो में बदमाशो और गुण्डो का रजिस्टर रखा जाता है।

खुफिया पुलिस—सरकार कुछ कर्मचारी इसलिए भी रखती है कि वे गुप्त रूप से पता लगाते रहे कि प्रजा के कौन-कौन आदमी सरकार के विरुद्ध षड्यंत्र, जालसाजी अथवा डकैती करते हैं या नकली सिक्का आदि बनाते हैं। इन कर्मचारियो को 'सी. आई. डी.' या खुफिया पुलिस कहते हैं। दूसरी पुलिस की तरह इसके कर्मचारियों की खास वर्दी नही होती। यह हमारे तुम्हारे जैसे ही कपड़े पहनते हैं; इस लिए इन्हे कोई पहचान नही सकता, और यह चुपचाप गुप्त रूप से अपना काम करते रहते हैं। एक-एक प्रान्त की खुफिया पुलिस के प्रधान अफसर का दर्जा साधारण पुलिस के डिप्टी-इन्स्पेक्टर-जनरल के बराबर होता है। इसके अधीन कुछ इन्स्पेक्टर और सबइन्स्पेक्टर होते हैं।

अगरेजो के शासन-काल मे खुफिया पुलिस खासकर देश-प्रेमी या राष्ट्रीय भावना वाले सज्जनो के पीछे लगी रहती थी, उसका मुख्य काम लोगो के आज़ादी के विचारों को कुचलना था। अगस्त १९४७ मे भारत के स्वतन्त्र हो जाने पर भी उसने जनता की गुडे और बदमाशो से रक्षा करने की ओर ध्यान न दिया। हजारो साम्प्रदायिक मुसलमानों ने गुप्त रूप से हथियारो का संग्रह करके दंगो के लिए तैयारी की। राष्ट्रीय नेताओ को मारने के लिए षड्यन्त्र रचे गए, और जनता अपने राष्ट्र-पिता गांधी

को खो बैठी। खुफिया पुलिस ने इस विषय में घोर उपेक्षा और अकर्मण्यता का परिचय दिया। अब सरकार इस ओर सतर्क हो गई है, और सुधार कर रही है।

रिज़र्व पुलिस—सरकार कुछ पुलिस ऐसी भी रखती है, जिसे किसी खास जगह काम करना नहीं होता, यह जहाँ-ज़रूरत होती है, वहाँ भेज दी जाती है। इसे 'रिज़र्व पुलिस' कहते है। जब सरकार को यह मालूम होता है कि किसी विशेष ग्राम या नगर मे अधिक उपद्रव होते हैं, तो वह वहाँ इस पुलिस में से कुछ भेज देती है, और इसका खर्च उस स्थानवालों से वसूल करती है। इसे 'प्यूनिटिव' पुलिस कहते हैं। 'प्यूनिटिव' का अर्थ है, दण्ड सम्बन्धी।

रेलवे पुलिस—स्टेशनों तथा रेलगाड़ियों में भी पुलिस की आवश्यकता होती है, इसके लिए अलग पुलिस रहती है। इसके आदमी स्टेशनो पर काम करते हैं, तथा रेल में मुसाफिरों के साथ जाते हैं।

पुलिस का संगठन—पुलिस का सगठन प्रान्तवार है, अर्थात अलग-अलग प्रान्तो की पुलिस जुदा-जुदा है। प्रान्तीय पुलिस का प्रधान अफसर इन्स्पेक्टर-जनरल कहलाता है। उसके अधीन डिप्टी इन्स्पेक्टर-जनरल होते हैं। ये एक-एक 'रेन्ज' की निगरानी करते है, जिसमें आठ-दस ज़िले होते हैं। प्रत्येक ज़िले मे एक पुलिस-सुपरिटेन्डेन्ट रहता है, यह ज़िले की शान्ति के लिए ज़िला-मजिस्ट्रेट के, तथा अपराधो की खोज और निवारण के लिए डिप्टी इन्स्पेक्टर-जनरल के, अधीन होता है। इसके एक

या अधिक सहायक या डिप्टी सुपरिंटेंडेंट रहते हैं।

प्रत्येक ज़िला तीन-चार सर्कलों या हलकों में, और एक हलका ४-५ पुलिस-स्टेशन या थानों में, बंटा रहता है। थाने का औसत क्षेत्रफल २०० वर्ग मील है, इसमें कई पुलिस-चौकियां होती हैं। प्रत्येक हल्का एक इन्सपेक्टर के अधीन, और थाना सबइन्स्पेक्टर (थानेदार) के अधीन होता है। सबइन्स्पेक्टर अपराधों की खोज तथा जाँच करता है, और अपने क्षेत्र की शान्ति का उत्तरदाता है; इन्स्पेक्टर का काम केवल निरीक्षण सम्बन्धी होता है। सबइन्स्पेक्टर के नीचे एक हेडकान्स्टेबल और कई कान्सटेबल रहते हैं। शहरों में एक-एक कोतवाल भी होता है। कलकत्ता, बम्बई और मदरास में पृथक् पृथक् पुलिस, कमिश्नरों तथा उनके दो या अधिक सहायकों के अधीन, रहती है। प्रत्येक थाने में कई कई गांव होते हैं।

गांवों में पुलिस का काम चौकीदार करते हैं। जब वहाँ कोई चोरी आदि हो जाती है, तो चौकीदार उसकी सूचना थाने में करता है। थानेदार उसकी आवश्यक जांच तथा प्रबन्ध करता है। पहले भारतवर्ष में थानों की संख्या दस हज़ार, पुलिस कर्मचारियों की संख्या दो लाख के करीब, और वार्षिक व्यय लगभग ग्यारह करोड़ रुपये होता था; अब तो सब बातें बहुत बढ़ी हुई हैं।

रेलवे पुलिस का संगठन पृथक् है। इसका ज़िला-पुलिस से कोई सम्बन्ध नहीं है।

जनता के सहयोग की आवश्यकता—पुलिस अपराधियों

की खोज या गिरफ्तारी आदि का कार्य अच्छी तरह तभी कर सकती है, जब उसे जनता का यथेष्ट सहयोग प्राप्त हो। परन्तु यहाँ जन साधारण का उससे सहयोग करना दूर रहा, वे उसे देखकर ही घबरा जाते हैं। इसका कारण यह है कि अधि-कांश पुलिस कर्मचारी अपने आपको प्रजा का सेवक न समझ कर उस पर अपनी धाक जमाने की फिक्र मे रहते हैं। लोगो को डर रहता है कि कहीं पुलिसवाले के पास जाने और उससे बातचीत करने से हम किसी व्यर्थ के झंझट मे न फँस जायँ। आवश्यकता है कि पुलिसवाले अपने कर्त्तव्य को समझें। उन्हे ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए कि वे अपने सेवा-कार्य और उत्तरदायित्व को ठीक तरह निभाएँ, वे लोगो से प्रेम और सभ्यता का व्यवहार करते हुए हर प्रकार उनके सहायक हो। तब ही उन्हे जनता का सहयोग अच्छी तरह मिलेगा।

प्रान्तीय रक्षा-दल—पिछले वर्षों मे मुसलिम लीग ने भारतवर्ष मे जो साम्प्रदायिक विष फैलाया, उससे स्वतन्त्र भारत के सामने आन्तरिक सुरक्षा के प्रश्न ने बहुत ही जटिल रूप धारण किया। १५ अगस्त १९४७ को भारतवर्ष स्वाधीन और विभाजित हुआ। उसके बाद यहाँ बहुत से मुसलमानो ने पांचवे दस्ते या भीतरी शत्रु का काम किया। स्थान-स्थान पर गृहयुद्ध, स्त्रियो को भगाने और बेइज्जत करने, लूट मार, आग लगाने, आदि की दुर्घटनाएँ हुई। अब प्रान्तो में प्रान्तीय रक्षा-दलो की स्थापना हो रही है। रक्षा-दल का उद्देश्य लोगों को

सैनिक शिक्षा देकर सच्चा नागरिक बनाना है। इसका काम होगा मा बहनों की रक्षा करना, मुनाफेखोरी तथा घूसखोरी रोकना, (झूठी) अफवाहें न फैलने देना, सरकारी सूचनाएं और जरूरी खबरें जगह-जगह पहुँचाना आदि। यदि संकट पड़ने पर प्रान्त या देश की रक्षा के लिए लड़ने की आवश्यकता होगी तो रक्षा दल के युवक इसके लिए बलिदान होने को तैयार रहेंगे। शान्तिकाल मे ये सैनिक जनता का अज्ञान दूर करेंगे, उसमें सहयोग तथा नागरिकता की भावना बढ़ावेंगे, और जाति-भेद तथा अछूतपन आदि आदि सामाजिक कुरीतियाँ और अंधविश्वास दूर करेंगे।

पुलिस सम्बन्धी खर्च—पहले भारतवर्ष भर में पुलिस का वार्षिक व्यय दस-बारह करोड़ रुपए होता था, परन्तु क्योंकि उन दिनो पुलिस जनता पर अंगरेजी हकूमत का आतंक जमाने मे लगी रहती थी, उसका यह खर्च भी लोगो को बहुत अखरता था। अब पुलिस का काम गुन्डो, बदमाशो, तथा चोर डाकुओं की खोज करना और नागरिक जीवन सुखमय बनाना है। इसलिए इस मद में खर्च बहुत बढा हुआ है। मिसाल के तौर पर जहां संयुक्तप्रान्त मे पहले सालाना खर्च दो करोड़ रुपए से भी कम था, अब सात करोड़ रुपये खर्च होता है। उद्देश्य की दृष्टि से इस समय यह खर्च आवश्यक है, तथापि भविष्य मे इसे यथाशक्ति घटाया जाना चाहिए। इसके लिए नागरिकों को चाहिए कि मेलजोल से रहें, साम्प्रदायिक भावनाओं से बचें, और गुण्डो और बदमाशो का दमन करने मे पूर्णरूप से

सहायक हो, चाहे वे किसी भी जाति या धर्म के माननेवाले हो। ऐसा होने पर पुलिस की अधिक आवश्यकता न रहेगी, और उसका खर्च खुद ही घट जायगा।

सड़क के नियम—तुम जानते हो कि पुलिस के सिपाही शहरो मे सड़को के चौराहे पर खड़े हुए यह देखते रहते हैं कि गाड़ी, इक्के, तांगे, साइकल तथा मोटर आदि ठीक नियम से चलते हैं या नही, उनसे किसी को चोट-चपेट तो नही आती या कोई लड़ाई-झगड़ा तो नही होता। सड़क सम्बन्धी नियम प्रत्येक नागरिक को जानने चाहिए। हम यहाँ कुछ मुख्य-मुख्य नियम देते हैं:—

(क) पैदल चलने वालों के लिए। (१) जहां तक सम्भव हो, हमेशा अपने बायें हाथ को चलना चाहिए। जहाँ सड़क के किनारे पटरी या पगडण्डी हो तो उस पर चलना चाहिए। सड़क के बीच में या दायीं ओर को न चलो (२) सड़क पर खड़े होकर कोई काम या किसी से बातचीत न करो। जब सड़क पार करनी हो तो पहले देखलो कि सड़क पर किसी तरफ से कोई सवारी तो नहीं आ रही है, यदि आती दिखाई दे तो पहले उसे निकल जाने दो।

(ख) सवारियो के लिए। (१) सड़क पर, अपने बायें हाथ को रहो। (२) बहुत ही आवश्यकता हुए बिना दूसरे के आगे न निकलो। विशेष दशा में जब आगे निकलना ही पड़े तो घंटी या पोंगा बजाकर आगे की सवारी को सूचित कर दो। सूचना पाने पर आगेवाली सवारी बायीं तरफ हटकर पीछे आनेवाली सवारी को आगे बढ़ने के लिए रास्ता देदे। (३) यदि किसी सवारी को रास्ते में, बिगड़ जाने से या किसी विशेष कारण से, रुकना पड़े तो उसे सड़क के बायीं तरफ

किनारे पर खड़ा होना चाहिए। (४) बैलगाड़ीवालों को जब मालूम होता है कि कोई मोटर आ रही है तो उन्हें बहुधा बैलों को रोकने के लिए गाड़ी से नीचे उतरना पड़ता है, जिससे बैल मोटर से भड़क न जायँ। ऐसी दशा में बैलगाड़ीवालों को सड़क के बीच न उतर कर उसके (बायें) किनारे उतरना चाहिए। (५) प्रत्येक सवारीवाले को चौराहे पर खड़े हुए पुलिस के आदमी के संकेतों का ज्ञान होना चाहिए और उसके आदेश का पालन करना चाहिए। (६) दिन छिपते ही प्रत्येक सवारीवाले को अपनी सवारी में रोशनी कर लेनी चाहिए।



छठा पाठ

अदालतें



पिछले पाठ में तुम पुलिस का हाल पढ़ चुके हो। जिस आदमी को पुलिस अपराधी समझकर गिरफ्तार करती है, अथवा जिस पर कोई मनुष्य किसी प्रकार का मुकदमा चलाता है, उसके विषय में यह निश्चय करना होता है कि वह असल में अपराधी है या नहीं; और यदि वह अपराधी है तो उसे क्या और कितना दण्ड मिलना चाहिए। यह कार्य पुलिस नहीं कर सकती, इसे पंचायत, न्यायालय या अदालत करती है। इसके लिए खास आदमी रहते हैं, जिन्हे पंच मुन्सिफ, मजिस्ट्रेट या

जज आदि कहते हैं। ये दोनो पक्ष की बातें सुनते हैं। बहुधा ये उनकी बातो के सम्बन्ध मे, उनके पेश किये हुए गवाहो के बयान भी सुनते हैं। अदालत में प्रायः दोनो पक्षवाले अपना अपना वकील कर लेते हैं, जो अदालतको उनकी बात कानून की दृष्टि से समझाता है। मुकदमे के बारे म आवश्यक बाते सुनकर अदालत अपना फैसला देती है; जिस आदमी को वह अपराधी समझती है, उसे दण्ड देती है। दण्ड देने के विषय मे सरकारी कानून की पुस्तकें मौजूद हैं, उनके अनुसार अपराध का विचार किया जाता है।

अदालतों की आवश्यकता—शायद तुम सोचते होगे कि ऐसे कार्य के लिए अदालत की क्या आवश्यकता है। जिस आदमी की कोइ हानि हो या जिसे चोट लगे, वही आदमी अपराध करनेवाले को अपनी इच्छानुसार दण्ड दे लिया करे। प्राचीन काल मे बहुत से स्थानो मे ऐसा ही होता था। पर, इससे बहुत गड़बड़ी मचती थी। उदाहरण के लिए कल्पना करो राम से मोहन की कुछ हानि होने पर मोहन स्वयं ही उसे दण्ड देने

झगड़ा होगा। इस प्रकार समाज में द्वेष और कलह बढ़ता ही जायगा। इसलिए पंच, पंचायत या अदालतों द्वारा न्याय कराना अच्छा है।

फौजदारी और दीवानी मामले—तुमने कभी-कभी लोगों को यह कहते सुना होगा कि वहाँ फौजदारी या मारपीट हो गई, या यह कि उन लोगों का लेनदेन आपस में नहीं निपटा, अब दीवानी में मामला चलेगा। इस प्रकार अदालतों में जो मामले-मुकद्दमे चलते हैं, वे या तो फौजदारी के होते हैं, या दीवानी के। इनका भेद उदाहरण द्वारा स्पष्ट हो जायगा। कल्पना करो कि एक आदमी चोरी या लूट-मार करता है या किसी को गाली देता है। ये अपराध समाज के विरुद्ध माने जा सकते हैं, ऐसा आदमी चाहे-जिसका माल-असबाब चुरायेगा, और चाहे-जिसे गाली देगा। ऐसे आदमियों से चाहे-जिसकी हानि हो सकती है। इस प्रकार के, अर्थात् चोरी या मारपीट आदि के, अपराध फौजदारी के अपराध कहलाते हैं। इनका फैसला फौजदारी अदालतें करती हैं।

अब हम दूसरे प्रकार के अपराधों का उदाहरण लेते हैं। कल्पना करो कि एक आदमी किसी से रुपया उधार लेकर उसे चुकाता नहीं। यह उसी मनुष्य की हानि करता है, जिसने उसे उधार दिया है। समाज के दूसरे आदमी उससे इस प्रकार का व्यवहार न करके, हानि से बचे रह सकते हैं। ऐसे अपराधों को दीवानी अपराध, और इनका फैसला करनेवाली अदालतों को दीवानी अदालतें कहते हैं।

फौजदारी अदालतें—कहीं-कहीं तो एक जिले में, और कहीं कुछ जिलो के एक समूह मे, एक सेशन कोर्ट या फौजदारी अदालत होती है। इसका प्रधान अधिकारी सेशनजज कहलाता है। यह वही व्यक्ति होता है जो जिला-जज की हैसियत से दीवानी मामलो का फैसला करता है। सेशन-जज फाँसी का दड दे सकता है; परन्तु इस दण्ड की मंजूरी उस प्रान्त की ऊँची अदालत अर्थात् हाईकोर्ट आदि से मिल जानी चाहिए।

सेशन-जज अपने कार्य में कुछ दूसरे आदमियो की भी सहायता लेता है। ये शहर के अच्छे शिक्षित और विचारवान लोगो मे से चुने जाते हैं, इन्हे 'जूरर', तथा इनके समूह को 'जूरी कहते हैं। साधारण छोटी जगहों में इनके स्थान पर 'असेसर' रहते हैं। सेशन जज इन्हे मुकदमे की सब बात समझाकर इनकी सम्मति लेता है। जूरी की राय तो जज को माननी ही पड़ती है, परन्तु असेसरों की राय वह माने या न माने, यह उसकी इच्छा पर निर्भर रहता है।

मजिस्ट्रेट और उनके अधिकार—सेशन जजो के नीचे पहले, दूसरे और तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट रहते हैं। पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट को दो साल तक की कैद और एक हजार रुपये तक जुर्माना करने का अधिकार होता है। दूसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट छः महीने तक की कैद और दो सौ रुपये तक जुर्माना कर सकते हैं! तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट एक मास की कैद और पचास रुपये तक जुर्माना कर सकते हैं। कुछ शहरो मे आनरेरी

मजिस्ट्रेट रहते हैं; ये अवैतनिक होते हैं, अर्थात् इन्हें तनख्वाह नहीं मिलती। इनमें से किसी को पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट के अधिकार होते हैं, किसी को दूसरे दर्जे या तीसरे दर्जे के।

दीवानी की अदालतें—प्रायः हर एक जिले में एक जिला-जज होता है। उसकी अदालत जिले मे सबसे बड़ी दीवानी अदालत है। उसमें नीचे की अदालतो के फैसलों की अपील हो सकती है। जिला-जज के नीचे 'सबजज' होते हैं। सयुक्तप्रान्त में सबजज को सिविल जज कहते हैं। इसके नीचे मुन्सिफ का दर्जा है। मुन्सिफो के पास आम तौर पर १०००) रु० तक के मुकदमे पेश होते हैं। सबजज की अदालत में बड़ी-से-बड़ी रकम तक का मामला दायर हो सकता है; जिला-जज की अदालत मे १०,०००) रु० से अधिक का मुकदमा दायर नही हो सकता।

अपराधियों को दंड—भारतवर्ष की अदालतों मे प्रायः ये दंड दिये जाते हैं :—(क) जुर्माना, (ख) बेत या कोड़े लगाना (ग) सादी कैद (घ) सख्त कैद, जिसमें कुछ समय की एकान्त की कैद भी सम्मिलित है, (च) देशनिकाला या कालापानी, और (छ) प्राणदंड या फाँसी। सादी कैदवालों को कुछ काम नही करना पड़ता। सख्त कैदवालों को उनके लिए नियत किया हुआ कार्य करना होता है।

दंड देने के चार उद्देश्य होते हैं :—(१) समाज की अपराधियों से रक्षा करना, (२) जिस व्यक्ति को दंड मिले, उसके आचरण का सुधार करना, (३) दूसरों को शिक्षा देना, जिससे वे ऐसे कार्य न करें, और, (४) जिसकी हानि हुई हो, उसे या

उसके सम्बन्धियो को संतोष दिलाना। वर्तमान दंड-व्यवस्था से ये उद्देश्य कहाँ तक सिद्ध होते हैं, और उसमें क्या सुधार होना चाहिए, इसका विचार हमारी 'अपराध चिकित्सा' पुस्तक मे किया गया है।

फैसलों की अपील—यदि कोई मनुष्य मुकदमे के सम्बन्ध मे किसी अदालत के फैसले से संतुष्ट न हो तो वह उसका विचार उससे ऊँचे दर्जे की अदालत से करा सकता है। इसे 'अपील करना' कहते हैं। फौजदारी के मुकदमो मे, दूसरे और तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट के फैसले की अपील जिला-मजिस्ट्रेट के यहाँ, और पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट के फैसले की अपील सेशन जज के यहाँ होती है। 'सेशन जज' के फैसले की अपील प्रान्त के चीफकोर्ट या हाईकोर्ट मे होता है। फाँसी की सजा पानेवाला आदमी गवर्नर या गवर्नर-जनरल से दया के लिए प्रार्थना कर सकता है।

दीवानी के मुकदमो मे मुन्सिफ के फैसलो की अपील जिला-जज के पास हो सकती है, वह चाहे तो उसे सबजज के पास भेज सकता है। सबजज या जिला-जज के फैसलों की अपील, कुछ दशाओं मे, हाईकोर्ट मे हो सकती है। कुछ खास हालतों मे हाईकोर्ट के फैसलो की अपील देहली के संघ न्यायालय मे पहुँचती है। इसके विषय मे हम पीछे लिखेंगे

मुन्सिफ तहसीलदार आदि रहते हैं. इन्हें मालगुजारी सम्बन्धी फैसला करने के थोड़े-बहुत अधिकार हैं ।

भारतवर्ष में मुकदमेबाजी—एक समय था कि भारत में लोग मुकदमेबाजी से बड़ी घृणा या नफरत करते थे । अब यह घरों को बरबाद करनेवाला खर्चीला काम दिनोदिन बढ़ता ही जा रहा है । दीवानी के मुकदमों की वार्षिक औसत बीस लाख से ऊपर बैठती है, फौजदारी के इससे कम हैं । अदालतों में अनेक मामलों में ठीक न्याय नहीं होता, अपराधी छूट जाता है, और निर्दोष को दंड मिल जाता है । लोगों को चाहिए कि अपना काम शान्ति और ईमानदारी से करें । यदि कभी किसी से झगड़ा हो ही जाय तो जहाँ तक हो सके, उसे आपस में पंच द्वारा, निपटालें । प्रान्तों की सरकारें पंचायतें बढ़ा रही हैं ।

पंचायतें—स्वतंत्र भारत के प्रत्येक गांव या गांव-समूह में एक पंचायत अवश्य होगी । इसके लिए प्रत्येक प्रान्त में पंचायत-कानून बन रहे हैं । उनके अनुसार ग्राम-सभाओं द्वारा निर्वाचित पंचायतों को अपने-अपने गांव की शिक्षा, सामाजिक सेवा, सफाई, प्रबन्ध, और विकास सम्बन्धी अधिकार होंगे । वे माल-गुजारी और ग्राम-कर भी एकत्र कर सकेंगी । अब गांव वालों के बहुत से मामले जहाँ के तहाँ सहज ही निपटा दिए जायंगे और उनको मुकदमेबाजी से बहुत छुटकारा मिल जायगा । नागरिकों को चाहिए, योग्य पंचों के चुनाव में भरसक योग दें ।

सातवाँ पाठ

जेल



पिछले पाठ में यह बताया जा चुका है कि अपराधियो को अदालत से किस-किस प्रकार का दंड मिलता है। उनमें से एक दंड कैद भी है। कैद की सजा पानेवालो के रहने के लिए बस्ती से बाहर खास मकान बनवाये जाते है। इन मकानो में कैदी तथा उनका प्रबन्ध करनेवाले रहते हैं, दूसरे आदमी वहाँ नहीं रहने पाते। इन मकानो को 'जेल' या 'जेलखाना' कहते है। संभव है, तुमने बाहर से किसी जेल की दीवार देखी हो। जेल के चारों ओर की दीवार इतनी ऊँची और मजबूत इस वास्ते बनायी जाती है कि कैदी उसे फलाँग कर बाहर न निकल सकें।

जेलों के भेद—सब कैदियों की कैद की मियाद बराबर नही होती; अपराध के अनुसार किसी को थोड़े समय की कैद होती है, किसी को बहुत समय की। कैद की अवधि के अनुसार अलग-अलग प्रकार के जेलों का प्रबन्ध किया जाता है। जिन जेलो मे साल भर या अधिक समय के कैदी रहते हैं, उन्हे 'सेन्ट्रल जेल' कहत हैं। कई-कई जिलो के वास्ते एक ही सेन्ट्रल जेल होता है। पन्द्रह दिन से लेकर साल भर तक के कैदी

ज़िला-जेल में रहते हैं। पन्द्रह दिन से कम की सज़ा वाले कैदी छोटी जेल में रहते हैं। इस प्रकार जेलों के तीन भेद हैं.— सेन्ट्रल जेल, ज़िला-जेल, और छोटे जेल।

जेलों का संगठन—जेलों का संगठन और प्रबन्ध प्रान्त-वार है। एक प्रान्त के सब जेलों का सबसे उच्च अधिकारी इन्सपेक्टर-जनरल कहलाता है। प्रत्येक जेल के कैदियों के प्रबन्ध, स्वास्थ्य और आचरणादि की देखरेख करने के लिए कुछ कर्मचारी रहते हैं। इनमे से सुपरिन्टेंडेंट जेल के साधारण प्रबन्ध, खर्च, तथा कैदियों की मेहनत और सज़ा की निगरानी करता है। मेडीकल अफसर कैदियों के स्वास्थ्य और चिकित्सा आदि का ध्यान रखने के लिये होता है। 'जेलर' कैदियों के लिए पूर्ण रूप से जिम्मेवार होता है, वह हर समय जेल में अथवा जेल के पास ही रहता है, और कैदियों के लिये आवश्यक प्रबन्ध करता है। वार्डरों अर्थात् जेल के पहरुओं का काम पुराने कैदियों से भी लिया जाता है। ज़िला-मजिस्ट्रेट अपने ज़िले के जेलों की देख-रेख करता है।

कैदियों का रहन-सहन—प्राय. एक एक प्रकार के अपराध करनेवाले सब कैदी जेल में इकट्ठे रहते हैं; फौजदारी के एक जगह, दीवानी के दूसरी जगह। स्त्रियों को पुरुषों से अलग रखा जाता है। सख्त कैदवालो को आठ-नौ घंटे काम करना होता है। ये मिट्टी खोदते, मरम्मत करते, आटा पीसते कोल्हू चलाते, पानी भरते या कोई और काम करते हैं। इन्हें दरी, कालीन, निवाड या कपड़ा बुनने का, या दूसरी कारीगरी का

अभ्यास कराया जाता है, जिससे कैद से छूटने पर आजीविका प्राप्त करने मे सुविधा हो, और ये चोरी आदि करना छोड़ दें। जो कैदी दिया हुआ कार्य नही करते, उन्हे अधिक सख्त काम दिया जाता है। कभी-कभी उन्हे शारीरिक दंड भी मिलता है। इसी प्रकार, जो कैदी अपना काम अच्छी तरह कर लेते है और अफसरो को खुश रखते हैं, उनकी कैद की अवधि कम कर दी जाती है।

कुछ समय से सरकार ने कैदियो की हैसियत के अनुसार उनकी तीन श्रेणियाँ करदी हैं :—'ए', 'बी', और 'सी'। 'ए' श्रेणीवालो की सुविधाओ का विशेष ध्यान रखा जाता है, वे खाने-पहनने की अच्छी चीजो को अपने घर से अथवा अपने खर्चे से भी मँगा सकते हैं। 'बी' श्रेणीवालों का दर्जा इनसे नीचा होता है। 'सी' श्रेणी सबसे नीचे की है। अधिकांश कैदी इसी श्रेणी मे रखे जाते हैं। ये उन्ही वस्तुओ का उपयोग कर सकते है जो इन्हे जेल से दी जाती हैं। पहले जेलो में बहुत से राजनैतिक कैदी भी रहते थे, अब भारत के स्वतन्त्र होने पर इनकी संख्या बहुत ही कम रहती है, तथा उन्हें कई प्रकार की सुविधाएँ भी दी जाती हैं।

बहुधा वर्तमान जेल आदि से अपराधियो का विशेष सुधार नही होता; इसके विपरीत, कुछ आदमी यह दंड भुगतने के बाद और अधिक अपराधी बन जाते हैं। फांसी की सजा से तो अपराधियों का सुधार न होकर उनके जीवन का ही अन्त हो जाता है। इसलिए कई सभ्य देशों में इस दड को उठा दिया गया है। अब भारतवर्ष स्वतत्र हो गया है। यहां के कितने ही उच्च पदाधिकारी ऐसे व्यक्तियों में से हैं, जिन्हें जेल-जीवन का प्रत्यक्ष और निजी तौर पर अनुभव है। सरकार इस विषय मे गहरा विचार कर रही है कि किस प्रकार अपराध कम हो, और अपराधियों का यथेष्ट सुधार हो। वास्तव मे यह विषय बहुत गम्भीर और विचारणीय है। बड़े होने पर तुम इस सम्बन्ध में बहुतसी बातें जान सकोगे, तथा स्वय भी कुछ विचार कर सकोगे।

आठवाँ पाठ

डाक और तार आदि

पाठको! डाक के काम को तो तुम हर रोज देखते हो। इसके प्रबन्ध के कारण, तुम दूर-दूर रहनेवाले रिश्तेदारो या मित्रो के पत्र जल्दी और थोडे खर्च से ही पा लेते हो। तुम्हे उनका समाचार मिल जाता है, और तुम उनके पास अपनी खबर भेज सकते हो। जब किसी आदमी को दूर रहनेवाले

अपने किसी भाई-वन्धु या मित्र के सम्बन्ध मे कुछ ऐसा समाचार जानना हो कि उसका स्वास्थ्य कैसा है, या वह अपनी परीक्षा मे पास हुआ या नहीं, तो डाक बाँटनेवाले चिट्ठीरसा (पोस्टमेन) की कैसी इन्तजारी की जाती है, यह तुम जानते ही होगे।

पत्रों की यात्रा—चिट्ठियो के एक जगह दूसरी से जगह जाने की क्रिया किस तरह होती है? यह बात एक उदाहरण से तुम्हारी समझ मे आ जायगी। दो पैसे का पोस्टकार्ड लेकर, उसमें, जिधर वह कोरा है, उधर अपना समाचार लिखदो, और दूसरी ओर पत्र पानेवाले का नाम और पता लिख दो। अगर तुम्हे कुछ अधिक समाचार लिखना हो तो इधर भी, आधे हिस्से मे दायी ओर पता लिख कर शेष जगह मे तुम समाचार लिख सकते हो। अगर तुम्हे इससे भी अधिक समाचार लिखना हो या तुम यह चाहते हो कि तुम्हारा समाचार कोई दूसरा आदमी न पढ़ सके, तो तुम अपना पत्र लिफाफे में बन्द करके भेज सकते हो। डाक का लिफाफा छः पैसे में मिलता है। सादा कार्ड या लिफाफा मे भी जा सकता है; परन्तु उस पर टिकट लगाना होगा। अच्छा, तुम पोस्टकार्ड या लिफाफे को लेटरबक्स में डाल दो। निश्चित समय पर डाक के आदमी उस

फिर उन्हें थैले में बन्द करके रेलवे स्टेशन पर भेज देंगे। रेल-गाड़ी के एक या अधिक डिब्बों में डाक के आदमी रहते हैं, वे एक-एक स्टेशन की चिट्ठियाँ अलग-अलग छाँट लेंगे और क्रमशः उन्हें वहाँ देते जायँगे। स्टेशन से डाक के थैले डाकखाने में पहुँचाए जायँगे। वहाँ चिट्ठियों पर फिर स्थान और तारीख की मोहर लगाई जायगी, पश्चात् पोस्टमेन चिट्ठियों को उन उन आदमियों में बाँट देंगे, जिन-जिन के नाम की वे हैं। जो पत्र किसी गाँव के होंगे, उन्हें गाँव में जानेवाला पोस्टमेन ले जायगा। अब तुम्हारी समझ में आ गया होगा कि चिट्ठियाँ एक जगह से दूसरी जगह कैसे पहुँचती हैं। मोहर को देखकर तुम जान सकते हो चिट्ठी कब चली थी, और कब तुम्हारे यहाँ के डाकखाने आई।

डाक भेजने के साधन - ऊपर बताया जा चुका है कि डाक भेजने का काम रेल द्वारा होता है। गाँवों में डाक देहाती पोस्टमेन ले जाता है; वह या तो पैदल जाता है, या घोड़े या ऊँट आदि पर। इनके अतिरिक्त डाक भेजने के और भी साधन हैं। बहुत सी जगहों में अब मोटर द्वारा ही डाक का काम जल्दी और सुभीते से हो जाता है।

इंगलैंड, अमरीका आदि देशों की डाक वहाँ जहाज से आती है। स्थल-मार्ग से उनका भारतवर्ष से सम्बन्ध नहीं है; रास्ते में समुद्र पड़ता है। स्थल-मार्ग से डाक के आने में देर भी बहुत लगती है, इसलिये जहाजों से काम लिया जाता है। अब हवाई जहाजों का प्रचार बढ़ता जा रहा है। इनके द्वारा डाक

(तथा अन्य सामान) के आने मे जल-मार्ग या स्थल मार्ग का प्रश्न ही नही रहता। ये हवा के रास्ते आते हैं और बहुत जल्दी यात्रा तय करते हैं। हाँ, अभी इनके द्वारा डाक भेजने मे खर्च बहुत पड़ता है। आशा है धीरे-धीरे उन्नति हो जाने पर वह घटता जायगा।

डाक से रुपया भेजने का काम पत्रो की तरह अखबार तथा पुस्तको आदि के पार्सल भी डाक द्वारा जहाँ-तहाँ भेजे जाते हैं। यही नहीं; डाक से रुपयों का मनीआडर भी भेजा जाता है। मनीआडर भेजनेवाला, एक फार्म भर कर उसे, रुपये और फीस सहित अपने यहाँ के डाकखाने में देता है। यह फार्म उस स्थान पर भेज दिया जाता है, जहाँ का इस पर पता होता है। मनीआडर लेनेवाला इस पर दो जगह हस्ताक्षर करके पोस्टमेन को लौटा देता है, और रुपया ले लेता है; एक हस्ताक्षर डाकखाने में रह जाता है, और दूसरा रुपया भेजनेवाले के पास पहुँचा दिया जाता है। याद रहे, मनीआडर फार्म के साथ प्राय: उसमें लिखी रकम नहीं भेजी जाती। जैसे एक डाकखाने को दूसरे का रुपया देना होता है, वैसे लेना भी तो होता है, क्योकि मनीआडर जाते हैं, तो आते भी हैं। फिर. प्रत्येक डाकखाने में कुछ रुपया जमा रहता है; कमी-वेशी की रकम इसमें से देकर काम चला लिया जाता है। कुछ समय वाद डाकखाने आपस मे लेन देन का हिसाव इकट्ठा चुका लेते हैं। मनीआडर की फीस दस रुपये तक दो आने है। यही दर आगे अधिक रकमों के लिए है। उदाहरणवत् ११) से २०) तक के मनीआडर की

फीस ।) है । एक मनीआर्डर छः सौ रुपये तक का जा सकता है ।

रुपया भेजने की दूसरी विधि भी है । आठआनेसे लेकर दस रुपये तक का 'पोस्टल आर्डर' डाकखाने से एक आना कमीशन और देकर खरीदा जा सकता है । इस पर पानेवाले का नाम लिखकर इसे डाक के लिफाफे में भेजा जाता है । इसे पानेवाला इस पर हस्ताक्षर करके डाकखाने में दे देता है, और इसका लेलेता है । इसमें फायदा यही है कि लिफाफे में पत्र भी रुपया चला जाता है । बड़ी रकम भेजने से फीस में भी किफायत हो जाती है । उदाहरण के लिए पचास रुपये के पोस्टल आर्डर ५०।−) में मिल जाते हैं, −)॥ लिफाफे का जोड़ कर कुल खर्च ५०।≡)॥ होता है, जबकि पचास रुपए मनीआर्डर से भेजने में ५०॥≡) खर्च होते हैं ।

डाकखाने में रुपया जमा कराना—डाकखानों में 'सेविंग बैंक' नाम का भी एक खाता रहता है । उसमें आदमी अपना रुपया जमा कर सकते हैं । इस विषय में विशेष 'रुपया पैसा और बैंक' नाम के पाठ में लिखा जायगा । डाकखाने में रुपया जमा करने का एक और भी ढङ्ग है । निर्धारित मूल्य देकर उसके, एक निश्चित अवधि तक के सूद सहित कीमतवाले कागज डाकखाने से खरीदे जा सकते हैं । यह कागज 'पोस्टआफिस नेशनल सेविंग सर्टिफिकट' कहलाते हैं । इनकी कीमत समय-समय पर बदलती रहती है । इनकी अवधि अलग-अलग—पांच साल, सात साल, बारह साल आदि—होती है । अवधि के अनुसार इनके सूद की दर जुदा-जुदा होती है । मिसाल के तौर

पर सौ रुपये के खरीदे हुए सर्टिफिकट के बारह साल पूरे होने पर सूद सहित डेढ़ सौ रुपए मिल जाते हैं। इससे पहले रुपया लेने मे रकम कम मिलती है, और डेढ़ साल पूरा होने तक तो डाकखाना इनका कुछ भी रुपया नहीं देता।

रजिस्टरी और बीमा—डाक से जो चिट्ठी या पारसल आदि जाता है, उसके साधारण महसूल के अलावा उस पर चार आने का टिकट और लगाने से उसकी रजिस्टरी हो जाती है। डाकखाने उसका अधिक अहतयात करते है। यदि तुम चाहते हो कि तुम्हे उसके पानेवाले के हाथ की रसीद मिल जाय तो तुम रजिस्टरी करने के अतिरिक्त एक आने का टिकट और लगाओ तथा 'एकनालेजमेंट' फार्म भर कर डाकखाने मे दे दो। यह फार्म तुम्हारे पास, पानेवाले के हस्ताक्षर होकर, आ जायगा। अगर तुम अपनी भेजी जाने-वाली वस्तु की और अधिक रक्षा या हिफाजत चाहते हो तो तुम उसका बीमा करा सकते हो। सौ रुपये तक के बीमे के लिए चार आने और इससे अधिक, दो सौ रुपये तक के लिए, साढ़े पांच आने का टिकट और ज्यादा लगेगा। यदि सयोग से बीमे की वस्तु खोई जाय तो डाकखाना तुम्हे उतनी रकम का देनदार होगा, जितनी का तुमने बीमा कराया है।

तार—यदि कही कुछ समाचार तुरत ही पहुँचाना हो, तो तार भेजा जा सकता है। डाक की अपेक्षा इसमें खर्च अधिक होता है। तथापि, हर रोज देश में हजारो तार आते-जाते हैं। समाचारपत्रों को दूर-दूर की ताजी खबरें छापने के

लिए तारों से बड़ा सुभीता है। तार से व्यापारियों को भी बड़ा लाभ होता है। व्यापारी तार द्वारा दूर देशों में माल का भाव ठहरा लेता है और क्रय विक्रय (खरीद-बेच) झटपट हो जाता है। जरूरत होने पर तार द्वारा रुपयों का मनीआर्डर भी भेजा जाता है। इसमें रुपया भेजनेवाले के भरे हुए फार्म का इन्तजार नहीं किया जाता। जब डाकखानेवाले दूसरे डाकखाने के अधिकारियों से तार द्वारा, किसी को रुपया देने की सूचना पाते हैं, वे उसे रुपया दे देते हैं। तार विभाग से राज्य-प्रबन्ध में भी बड़ी सुविधा होती है। भिन्न-भिन्न स्थानों के अफसर तार द्वारा सलाह-मशवरा कर सकते हैं; और आवश्यकतानुसार सेना या पुलिस तथा अन्य जरूरी सामान भेजने के लिए कहा जा सकता है। तार की दर और नियम आगे दिये जायँगे।

डाक और तार विभाग का संगठन—भारतवर्ष में डाक और तार का एक ही विभाग है। उसका देश भर में सबसे बड़ा अधिकारी 'डायरेक्टर जनरल' कहलाता है। इस विभाग के प्रबन्ध के लिए यह देश कुछ 'सर्कलों' में और प्रत्येक सर्कल कुछ डिवीजनों में बँटा हुआ है। सर्कल के अधिकारी को 'पोस्ट मास्टर-जनरल' और डिवीजन के अधिकारी को सुपरिन्टेंडेंट कहते हैं। हर एक सुपरिन्टेंडेंट के नीचे कुछ इन्सपेक्टर रहते हैं जो कई-कई जिलों के डाकखानों का निरीक्षण करते हैं। प्रत्येक जिले में एक बड़ा डाकखाना होता है उसका मुख्य अधिकारी पोस्टमास्टर कहलाता है। उसके नीचे जिले में कुछ सब-पोस्ट-आफिस और 'ब्राँच 'पोस्टआफिस' भी होते हैं। बड़े बड़े गाँवों

में डाकखाने हैं, उनका काम प्रायः वहाँ की पाठशाला के मुख्याध्यापक ही करते है, उन्हें इस काम के लिये कुछ भत्ता (अलाउँस) मिलता है।

भारतवर्ष में अभी बहुत से स्थानों मे डाकखाने नहीं हैं। कितने ही स्थान ऐसे हैं, जहाँ से डाकखाना कई-कई मील दूर है और डाक हफ्ते में केवल एक या दो दिन जाती है। इसलिए देश मे बहुत से नये डाकखाने खोले जाने की जरूरत है।

डाक सम्बन्धी नियम—डाक सम्बन्धी कुछ मुख्य-मुख्य नियम ये हैं :—डाकखाने प्रायः दस बजे से चार बजे तक खुले रहते हैं, कहीं-कहीं उनका समय सवेरे सात बजे से दोपहर तक तथा दो से चार बजे तक होता है। इतवार और खास-खास त्योहारों की छुट्टियाँ रहती हैं। अन्य दिनों में मनीआर्डर प्रायः तीन बजे तक लिए जाते हैं, हाँ शनिवार को मनीआर्डर एक बजे तक, तथा पत्रों, पेकटों और पार्सलों की रजिस्टरी तीन बजे तक हो सकती है। 'लेट फी' का एक आने का टिकट लगाकर पत्रों की, तथा दो आने का टिकट लगाकर पेकटों की, रजिस्टरी शनिवार के दिन चार बजे तक भी हो सकती है। आध आना 'लेट फी' टिकट लगा कर पत्र डाकखाने में डाक के साधारण समय के बाद भी, दिये जा सकते है, और एक आना 'लेट फी' टिकट लगाकर स्टेशन पर डाक-गाड़ी के समय भी भेजे जा सकते हैं।

छपनेवाली चीज़ (प्रेस मेटर), बीजक, बिल, आर्डर, पुस्तक, सूचीपत्र, विज्ञापन, आदि 'बुक-पोस्ट' में जा सकते हैं। इनका पेकेट इस तरह बनाया जाना चाहिए कि सिरे खुले रहें जिससे डाकखानेवाले चाहें तो इस बात की जाँच कर सकें कि इनके अन्दर कोई निजी पत्र आदि तो नहीं है। 'बुक-पोस्ट' पेकेट का महसूल इस समय पाँच तोले तक के लिए तीन पैसे, और उससे ऊपर प्रत्येक ढाई तोले का एक पैसा है। सामयिक (दैनिक, अर्द्ध साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक आदि) पत्र-पत्रिकाओं

के रजिस्टर्ड होने पर, उनका महसूल आठ तोले तक एक पैसा और उससे ऊपर बीस तोले तक दो पैसे होता है। वह जिस डाकखाने से रजिस्टर्ड होगा, उसी डाकखाने में उसपर यह महसूल लगेगा, अन्य डाकखानों में उस पर बुक-पोस्ट के हिसाब से महसूल देना होगा।

कार्ड, लिफ़ाफ़ा, पेकेट, या समाचारपत्र बिना टिकट या कम टिकट लगाकर भेजने से 'बैरङ्ग' कर दिया जाता है। इस दशा में जितना टिकट कम होगा, उसका दूना महसूल उस पत्र आदि के पानेवाले से लिया जायगा। यदि बैरंग पत्र आदि को वह आदमी लेना स्वीकार न करे, जिसका उस पर पता है तो उसे भेजनेवाले के पास लौटा कर, दूना महसूल उससे लिया जाता है। यदि वह महसूल न चुकाये तो उसकी सब डाक (पत्र, मनीआर्डर आदि) महसूल चुकाये जाने तक रोक रखी जायगी।

पुस्तक आदि चारों तरफ से अच्छी तरह बन्द करके भी डाक से भेजी जाती हैं। बहुमूल्य कागज़ात, वस्त्र, आभूषण आदि को उसके ऊपर कपड़ा सीकर भेजा जाता है। इन पार्सलों का महसूल प्रथम चालीस तोले तक छः आने फिर प्रत्येक चालीस तोले पर चार आना है। पार्सल के भीतर निजी पत्र रखा जा सकता है। इसका पूरा महसूल इसे भेजनेवाले को ही देना पड़ता है वह चाहे तो इसकी रजिस्टरी तथा बीमा भी करा सकता है।

यदि पत्र आदि भेजनेवाला यह चाहता है कि उसका पत्र नियत स्थान पर पहुँचने के बाद पाने वाले को तुरन्त मिल जाय तो उस पत्र पर दो आने का टिकट अधिक लगाना होता है। ऐसे पत्र पर 'एक्सप्रेस डिलीवरी' की एक लाल चिट चिपका दी जाती है। यह पत्र अपने स्थान पर साधारण डाक के साथ ही पहुँचता है, परन्तु इसके दिये जाने की व्यवस्था पहले कर दी जाती है।

डाक में चिट्ठी आदि डालने की भी रसीद मिल सकती है। उसे 'सर्टिफिकट-आफ़-पोस्टिंग' (कच्ची रजिस्टरी) कहते हैं। इसके लिये छपे

हुए फार्म होते हैं, सादे कागज पर चिट्ठी आदि के पानेवाले का पता लिखकर दे देने से भी काम चल सकता है। इस रसीद के लिए, तीन पत्रों या पैकटों तक के लिए दो पैसे का टिकट लगाना पडता है। डाक-कर्मचारी उस पर मोहर लगा देता है। इससे पत्र आदि भेजनेवाले के पास इस बात का सबूत रहता है कि उसने डाक में पत्र डाला। परन्तु डाकखाना इसके लिए कोई विशेष जिम्मेवारी नहीं लेता।

डाकखाने मे पैकेट या पार्सल वी० पी० से भी जाते हैं। डाक-महसूल तथा रजिस्टरी-खर्च सहित जितना मूल्य किसी चीज़ का लेना होता है, उतने की वी० पी० की जाती है। इसके लिए एक फार्म भरकर देना होता है। डाकखाना उस चीज़ को पानेवाले के पास पहुंचा देता है, और उससे वी० पी० की रकम तथा उसका मनीआर्डर-शुल्क ले लेता है। वी० पी० की रकम चीज भेजनेवाले को मिल जाती है। जिसके पास वी० पी० भेजी जाती है, अगर वह उसे लेने से इनकार करता है तो वी० पी० की वस्तु भेजनेवाले को लौटा दी जाती है। इस दशा में डाक-महसूल तथा रजिस्टरी खर्च के टिकट रद्द हो जाने से भेजनेवाले को इतना नुकसान सहना पड़ता है।

आठ आना और इसके बाद प्रति ६ शब्दों के लिए एक आना है।

अगर किसी आदमी को यह शिकायत हो कि डाकखाने या तार-घर में उसका काम ठीक नहीं हुआ, उसकी चिट्ठी या तार देर में मिला अथवा मनीआडर का रुपया नहीं आया, तो वह इस बात की शिकायत एक आने का टिकट लगाकर डाकखाने के पोस्टमास्टर को कर सकता है।

वर्तमान स्थिति—अंगरेजों के शासन-काल में डाक विभाग ऐसा सरकारी विभाग था, जिसम कोई बेईमानी या रिश्वत आदि न होने पर भी काम बहुत अच्छी तरह होता था, जनता की शिकायतों पर यथेष्ट ध्यान दिया जाता था। पर दूसरे महायुद्ध के समय इसमें विकार आ गया; सरकारी कमचारियो ने युद्ध-प्रयत्नो का ओर सबसे पहले ध्यान देना अपना लक्ष्य बना लिया। जनता की शिकायतें दूर करने की फिक्र ही न रही। भारतवर्ष के स्वतत्र होने पर भी अभी इसमें कुछ सुधार नहीं हुआ। रजिस्टरी की फीस तीन आने की जगह चार आने आने कर दी गइ; इससे समाचारपत्र या पुस्तको आदि के वी०पी० मंगानेवालो का भार बढ़ गया, और साहित्य के प्रचार में बाधा पहले से भी अधिक हो गई। यद्यपि सरकार ने कर्मचारियो के वेतन काफी बढ़ाए, पर काम में अभी तक बहुत ढील है। पत्रो और तार के आने मे अनेक बार इतनी देर हो जाती है कि उनका उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है। डाक विभाग के कामो मे अभी अंगरेजी भाषा का ही बोलबाला है; हिन्दी को नही अपनाया गया। इन बातो मे तुरन्त सुधार होने की जरूरत है।

बेतार-का-तार और टेलीफोन—भारतवर्ष के बड़े-बड़े नगरो मे बेतार-के-तार या 'वायरलेस' का भी प्रबन्ध है। इसके द्वारा इन नगरों में तथा अन्य देशों के प्रधान नगरो में. बहुत जल्द समाचार आ जा सकता है। समुद्र-पार के स्थानों में अथवा समुद्र में एक जहाज़ से दूसरे जहाज़ पर समाचार भेजने के लिए भी बेतार-का-तार ही काम में लाया जाता है। अब रेडियो द्वारा समाचार भेजने की ऐसी अच्छी व्यवस्था हो गई है कि एक वक्ता का भाषण, दूसरे आदमी हज़ारो मील के फासले पर अपने-अपने घरो में, इस यन्त्र के पास बैठे हुए साफ-साफ सुन सकते हैं।

आज कल टेलीफोन का भी प्रचार बढ़ता जा रहा है। इसका अधिकतर सम्बन्ध एक ही देश के अन्दर भिन्न-भिन्न स्थानो से, या एक एक नगर के ही भीतर रहता है। बड़े-बड़े शहरो मे, एक जगह से दूसरी जगह जाने-आने मे काफी समय लगता है। टेलीफोन के द्वारा आदमी अलग-अलग स्थानो मे, अपनी-अपनी दुकान या दफ्तर आदि में बैठे हुए कई-कई मिनट तक लगातार बातचीत कर सकते हैं।

नवाँ पाठ

रेल और मोटर

पहले आदमी पैदल जाते थे, या घोड़ो या ऊँट पर सवार होकर या बैलगाड़ी और घोड़ागाड़ी आदि में। इसमें सफर तय करने में समय बहुत लगता था, तथा थकावट अधिक

होती थी। अब साइकल, ट्रामवे आदि अनेक सवारियाँ चल पड़ी हैं। हवाई जहाजों का भी प्रचार बढ़ता जा रहा है। परन्तु सर्वसाधारण के लिए, लम्बी यात्रा करने की अन्य सवारियों में इतनी सुविधा नहीं होती, जितनी रेल और मोटर में। इस पाठ में इनका वर्णन करना है। पहले रेलों के बारे में विचार करते हैं।

रेल से यात्रा—तुम हर रोज़ रेलवे स्टेशन पर देखते होगे कि हज़ारों आदमी रेल का टिकट लेकर एक जगह से दूसरी जगह आते-जाते हैं। प्रत्येक टिकट पर यह छपा रहता है कि वह किस स्टेशन से, किस स्टेशन तक के लिए है; और उसका मूल्य क्या है। टिकट खो जाय तो उसका नम्बर और तारीख बताने से काम चल सकता है; नहीं तो उसके दाम फिर भरने पड़ते हैं।

रेलों से अन्य लाभ—स्टेशनों पर सवारी गाड़ी के अलावा तुमने मालगाड़ियाँ भी देखी होंगी। इनमें हज़ारों मन माल इधर से उधर जाता आता है। इस प्रकार रेलों से व्यापार की खूब वृद्धि होती है। यदि देश में एक जगह अकाल पड़ रहा हो तो खाने के पदार्थ दूसरी जगह से, जहाँ वे अधिक हों, जल्दी ही उस जगह लाये जाकर, बहुत-से आदमियों को भूखा मरने से बचाया जा सकता है।❀

❀ रेलों से एक हानि भी है; बहुत से पदार्थों को व्यापारी उन देशों में भेज देते हैं, जहाँ वे महँगे हों; फिर वे पदार्थ हमारे देश में पहले की तरह सस्ते नहीं रहते; बहुत माल विदेशों में चले जाने के कारण, यहाँ उनका भाव चढ़ जाता है।

रेलो द्वारा सरकार को राजप्रबन्ध के लिए पुलिस या फौज एक जगह से दूसरी जगह भेजने मे भी बड़ी सुविधा तथा किफायत होती है। इसके अलावा रेलो का, मनुष्यो के विचारो तथा रहनसहन पर भी, बड़ा प्रभाव पड़ता है। देश के जिन भागो में रेल चलती है, वहाँ के लोगो को एक दूसरे से मिलने का अवसर बहुत आता है। भिन्न भिन्न जातियो के, तथा अलग-अलग धर्मों को माननेवाले, आदमी परस्पर मे मिलने-जुलने से एक-दूसरे को अधिक जानने लगते हैं, और, उनमे सहयोग और सहानुभूति का भाव बढ़ जाता है। भारतवर्ष मे छूतछात के विचारो को दूर करने में रेलो से बड़ी सहायता मिली है। रेलो मे पास-पास बैठने के कारण, भिन्न-भिन्न जातियों के आदमियो को एक-दूसरे से पहले जैसा परहेज नहीं रहा।

रेलों का विस्तार—भारतवर्ष मे रेलो का काम, सौ वर्ष हुए, आरम्भ हुआ था। अब लगभग बियालीस हजार मील रेलवे लाइन है, इसमे से करीब सात हजार मील लाइन पाकिस्तान मे है। बहुत सी रेलवे लाइनो की मालिक सरकार है, कुछ देशी राजाओ की है तथा थोड़ी सी लाइन जिला-बोर्डों की बनवाई हुई है। रेलवे लाइनो की चौड़ाई भिन्न भिन्न स्थानो मे अलग अलग है। छोटी लाइनें दो-ढाई फुट की और बड़ी लाइनें ५ से ५॥ फुट तक की है।

समय पहुंचती है और कितनी देर ठहरती है, और भिन्न-भिन्न स्टेशनों में कितने मील का फासला है। हम यहाँ पर कुछ थोड़े से मुख्य-मुख्य नियम देते हैं :--

जो आदमी रेल में सफर करना चाहे, उसे रेलवे टिकट खरीद लेना चाहिए। गाड़ी न मिलने या उसमें जगह न रहने के कारण अगर कोई आदमी टिकट लेकर गाड़ी में न बैठ सके तो उसे चाहिए कि टिकट वापिस करदे और टिकट का मूल्य वापिस लेने के लिए दर्ख़ास्त दे दे। तीन वर्ष तक के बच्चों के लिए टिकट लेने की आवश्यकता नहीं है, और तीन वर्ष से ग्यारह वर्ष तक के बालकों के लिए आधा टिकट लेना काफ़ी है। टिकट उसके खरीदने के दिन, या उसकी मियाद के भीतर ही काम आ सकता है। बिना टिकट सफ़र करनेवालों से पूरा किराया तथा जुर्माना (जो टिकट के मूल्य का दूना हो सकता है) वसूल किया जाता है, या, उन्हें दूसरा दण्ड दिया जाता है।

यात्रा करनेवाले को चाहिए कि गाडी के समय से इतना पहले स्टेशन पर आवे कि शान्ति से टिकट लेकर गाड़ी में बैठ सके। यदि कभी संयोग से टिकट न लिया जा सके तो वह गार्ड को सूचना देकर गाड़ी में बैठ सकता है। इस दशा में, उससे आगे स्टेशन पर साधारण किराया ही लिया जायगा, जुर्माना आदि नहीं।

अगर गाड़ी में बहुत भीड़ हो तो मुसाफिर गार्ड से कहकर, जिस दर्जे का उसने टिकट लिया है उससे ऊपर के दर्जे में बैठ सकता है। उस दर्जे का किराया, जितना वह उस टिकट के मूल्य से अधिक हो, उतरनेवाले स्टेशन पर दे देना चाहिए। सब मिलाकर रेल में चार दर्जे होते हैं। सबसे निचला दर्जा तीसरा (थर्ड क्लास) होता है, उससे ऊपर ड्योढ़ा (या इंटर), फिर दूसरा दर्जा (सेकिंड क्लास) और सबसे ऊँचा दर्जा अव्वल दर्जा (फ़स्ट क्लास) होता है। टट्टी या पेशाब के लिए सभी दर्जों में व्यवस्था होती है। तीसरा दर्जे में मुसाफिरों की भरमार रहती है; ड्योढ़े दर्जे में भी भीड़ रहती है। दूसरे तथा अव्वल

दर्जे मे ही सोने के लिए जगह मिलती है; बैठने या लेटने की जगह गद्दी रहती है, बिजली के पखे तथा स्नान आदि की भी व्यवस्था रहती है। इन दर्जों के टिकटों का किराया उत्तरोत्तर अधिक है। रेल-किराया समय-समय पर बदलता रहता है। तीसरे दर्जे का यात्री अपने साथ २० सेर वज़न का सामान बिना महसूल ले जा सकता है, ड्योढे दर्जे-वाला ३० सेर, दूसरे दर्जेवाला ४० सेर और अव्वल दर्जे वाला ६० सेर। इससे अधिक वज़न होने पर उसका महसूल पेशगी ही देना होता है। अन्यथा मार्ग में जाँच होने पर उससे दूना भाड़ा वसूल किया जाता है। यात्रियों को चलती गाड़ी में बाहर पटरी पर खड़ा नहीं होना चाहिए, और फाटक खुला नहीं रखना चाहिए। खिड़की पर झुकना तथा सिर बाहर निकालना भी ठीक नहीं है। यदि कोई आदमी अपने पास बैठे हुए यात्रियों की इच्छा के विरुद्ध या उनके मना करने पर भी तम्बाकू पिये तो उस पर जुर्माना हो सकता है। यदि कोई आदमी नशा किए हुए हो, या अन्य यात्रियों को कष्ट पहुँचाए तो उसे दड दिया जायगा।

चलती गाड़ी में कोई खतरा हो, कोई दुष्ट बदमाशी करे, या भीड़ इतनी अधिक हो कि स्वास्थ्य बिगड़ने की आशंका हो, तो जजीर खींच लेनी चाहिए। इस पर जब गाड़ी रुक जाय तो गार्ड से सब बात कह देनी चाहिए। अत्यन्त आवश्यकता बिना जंजीर नही खींचनी चाहिए। जब गाड़ी स्टेशन पर ठहरी हो, यदि उस समय गाड़ी में बैठे हुए किसी आदमी के बारे में कुछ शिकायत करनी हो तो स्टेशन-मास्टर से करनी चाहिए।

साधारण सवारी-गाडियों के अलावा एक्सप्रेस या डाकगाड़ी मे भी यात्रा होती है। प्रायः इन में किराया सवारी गाड़ी से कुछ अधिक रहता है। गाडी या डिब्बा 'रिज़र्व' भी कराया जा सकता है, उसमें वही आदमी बैठते हैं, जिनके लिए वह रिज़र्व कराया जाता है। रिजर्व कराने के लिए २४ घटे पहले रेलवे ट्रेफिक मेनेजर के पास दर्खास्त दी

जाती है।

रेलगाड़ी से सामान या माल भी भेजा जाता है। बड़े-बड़े पार्सल डाक से भेजने में बहुत खर्च पड़ता है, उन्हें सवारी-गाड़ी से भेजने में किफायत होती है। मालगाड़ी से भेजने में किराया और भी कम लगता है; इससे माल सवारी-गाड़ी की अपेक्षा देर में पहुँचता है। यह बात माल भेजनेवाले की इच्छा पर निर्भर है कि वह माल का रेल-किराया स्वयं दे या उसके चुकाने का भार माल पानेवाले पर डाले। माल भेजनेवाले को रेलवे रसीद मिलती है, जिसे 'बिल्टी' कहते हैं। यह बिल्टी वह डाक से भेजता है; सादे लिफाफे में, बैरंग, डाक के लिफाफे में, रजिस्टरी या वी० पी० से। बिल्टी पानेवाला इसे दिखाकर अपना माल ले सकता है। अगर इसका महसूल पहले नहीं चुकाया गया है तो उसे महसूल चुकाना होता है। जिस समय माल स्टेशन पर पहुंचे, उसके ४८ घंटे के भीतर उसे छुड़ा लिया जाना चाहिए। देरी करने से 'डेमरेज' या हरजाना देना पड़ता है। डेमरेज सवारी गाडी के पार्सलों पर प्रति दिन दो आना, और मालगाड़ी से आनेवाले माल पर वज़न के अनुसार लिया जाता है।

यदि किसी रेलवे कर्मचारी के व्यवहार के बारे में, या रेल सम्बन्धी कोई अन्य शिकायत करनी हो तो रेलवे ट्राफिक मेनेजर के पास करनी चाहिए।

यातायात की कठिनाइयाँ—युद्ध-काल (१९३९-४५) में अनेक यात्रियों को रेल में बैठने की कौन कहे, खड़े होने को भी जगह नहीं मिली। जेब कटने और सामान चोरी जाने की घटनाएँ भी बढ़ी। कितने ही आदमियो ने बाहर पटरी पर खड़े खड़े और कुछ ने तो छत पर बैठ कर सफर किया, इससे अनेक दुर्घटनाएँ और मौतें तक हुई। अब रेल का किराया तथा कर्मचारियो का वेतन काफी बढ़ा हुआ है, पर रेल यात्रा के कष्ट

दूर नहीं हुए। मालगाड़ी से माल कब पहुँचेगा, इसका निश्चय नहीं रहता। सवारी गाड़ी का उपयोग बहुत बढ़ गया है, तो भी माल के लिए हफ्तों और कुछ दशाओं में महीनों इन्तजार करनी पड़ती है; और बहुत लिखा-पढ़ी होती है। रेलों में आगे बहुत सुधार करने की योजनाएँ बनी हैं, पर अभी तो यदि सब यात्रियों को रेल में बैठने की जगह मिलने और पार्सल या माल समय पर पहुँचने की व्यवस्था हो जाय तो भी गनीमत है। रेलवे कर्मचारियों को यात्रियों के प्रति बहुत सभ्य होने तथा रिश्वत-खोरी बन्द होने की बहुत आवश्यकता है।

मोटर—यह तो बताया ही जा चुका है कि मोटरों का प्रचार क्रमशः बढ़ रहा है। पहले इन्हें धनवान लोग अपने निजी काम के लिए रखा करते थे। वे ही इनमें सवार होते थे, परन्तु अब तो ये किराये पर भी चलने लगी हैं। और, यह एक रोजगार हो गया है। मोटरों द्वारा लोगों की यात्रा ही नहीं होती, सामान भी ढोया जाता है। प्रायः इनमें महसूल या किराये की दर रेल के बराबर ही रहती है। इनसे लोगों को यह

लिया जा सकता है। जिन स्थानो मे रेल जाती हैं, वहाँ भी बहुधा आमदफ्त बढ़ जाने के कारण मोटरें खूब चलती है।

मोटर चलाने के लिए सरकारी लैसेंस (अनुमति) लेना आवश्यक है। मोटर चलानेवाला सिर्फ उन्हीं सड़को या रास्तो पर अपनी मोटर ले जा सकता है, जहाँ के लिए उसने लैसेंस ले रखा हो। प्रत्येक मोटर मे बैठनेवालों को संख्या निश्चित की हुई रहती है। उससे अधिक बैठानेवाले को दंड होने का नियम है। तो भी प्राय. मोटर वाले अधिक सवारियाँ बैठाया करते हैं मोटर सम्बन्धी कुछ नियम पाँचवें पाठ के अन्त में दिये जा चुके हैं। कुछ स्थानो मे सरकारी मोटरें चलने लगी हैं। ये निर्धारित समय पर चलती हैं, और इनमे यात्रियों के बैठने की अच्छी व्यवस्था रहती है।

दसवाँ पाठ

शिक्षा

शिक्षा का महत्व—पाठको! तुम इस पुस्तक मे पुलिस, अदालतो और जेलों का हाल पढ़ चुके हो। देश की शान्ति के लिए इनकी बहुत जरूरत है। परन्तु देश की उन्नति के लिए यह भी आवश्यक है कि लोगो मे विविध विषयो के ज्ञान का प्रचार हो। इस वास्ते स्थान-स्थान पर लड़के और लड़कियो के लिए स्कूल आदि होने चाहिए, जिनमे शिक्षा पाकर वे न केवल लिखना-पढ़ना सीखें, वरन् ईमानदारी से अपना निर्वाह भी

करने लग जायँ; वे अपनी मानसिक और शारीरिक उन्नति के साथ नैतिक उन्नति भी कर सकें; वे अपने कर्त्तव्यो को समझें और एक दूसरे के साथ मिलकर, रहा करें। ऐसी शिक्षा पाये हुए आदमी चोरी या लूट मार आदि नहीं करते, और सुयोग्य नागरिक बन जाते हैं। कहा है कि एक स्कूल को खोलना कई जेलो को वन्द करना है।

प्रारम्भिक शिक्षा—अब हम वर्तमान संस्थाओ में मिलने-वाली शिक्षा के विषय में कुछ मुख्य-मुख्य बातें बतलाते हैं। प्राइमरी स्कूल बहुत से वड़े-बड़े गाँवों तथा सब शहरो में हैं। इनमे हिन्दी. बँगला, मराठी आदि देशी भाषाओं मे लिखना-पढ़ना तथा कुछ भूगोल और हिसाब सिखाया जाता है। इनकी पढ़ाई प्राय: चार वर्ष की होती है। गाँव के प्राइमरी स्कूल जिला-बोर्ड (या जिला-कौंसिल) के खर्च से, और शहरो के स्कूल म्युनिसपेलटियों के खर्च से चलते हैं। कुछ शहरो में म्युनिस-पेलटियो ने अपने-अपने नगर के कुछ मोहल्लो के लड़को के लिए यह नियम कर दिया है कि वे प्राय: छ: वर्ष की उम्र से लेकर दस वर्ष की उम्र तक अवश्य ही पढ़ें। जहाँ ऐसा नियम होता है, वहाँ शिक्षा अनिवार्य या लाजमी कही जाती है। ऐसा नियम तभी किया जाता है. जब पढनेवाले को कुछ फीस देनी न पड़े, क्योकि. वहुत से आदमी फीस का भार नही सह सकते। भारत वर्ष के देहातों में शिक्षा अनिवार्य और निश्शुल्क (मुफ्त) नहीं हुई है; शहरो में भी यह काम होना अभी वहुत कुछ शेष है।

माध्यमिक शिक्षा—पहले मिडल और मेट्रिक (दसवीं,

या कुछ स्थानों मे ग्यारहवीं) कक्षाओ की पढ़ाई को माध्यमिक शिक्षा कहा जाता था। अब कुछ प्रान्तो मे मेट्रिक तथा 'इंटर' (ग्यारहवीं और बारहवीं) की पढ़ाई उच्च माध्यमिक शिक्षा मानी जायगी। अन्य प्रान्तों मे इससे कुछ भिन्न व्यवस्था है। ऐसा प्रबन्ध किया जा रहा है कि विद्यार्थी माध्यमिक शिक्षा-संस्थाओ में कृषि या औद्योगिक विषयों की यथेष्ट शिक्षा पा सकें, जिससे उन्हें पीछे आजीवका प्राप्त करने की सुविधा हो।

उच्च शिक्षा—नयी व्यवस्था के अनुसार 'इंटर' या 'एफ० ए०' के आगे की पढ़ाई उच्च शिक्षा कही जायगी। 'इंटर' के बाद दो साल की पढ़ाई पूरी करने पर बी० ए० की परीक्षा होती है। बी० ए० पास को 'ग्रेजुएट' कहते हैं। इसके दो वर्ष बाद की परीक्षा पास करनेवाले एम० ए० हो जाते हैं। उच्च शिक्षा अभी तक प्रायः अंगरेजी द्वारा दी जाती रही है। उसका स्थान देशी भाषाएँ ले रही हैं।

उच्च शिक्षा का क्रम निश्चित करने और उसकी परीक्षा लेने का प्रबन्ध विश्वविद्यालय या 'यूनिवर्सिटियाँ' करती हैं। भारतीय संघ में सब मिलाकर अठारह विश्वविद्यालय हैं। इनमें पाँच तो संयुक्तप्रान्त में ही हैं:—इलाहाबाद, बनारस, आगरा, लखनऊ और अलीगढ़ में। मध्यप्रान्त का विश्वविद्यालय नागपुर में, और बिहार का पटना में है। चार नये विश्वविद्यालय शीघ्र ही स्थापित होने वाले हैं।

स्त्री-शिक्षा—स्त्री-शिक्षा का प्रचार क्रमशः बढ़ता जा रहा है। परन्तु पढ़नेवाली कन्याओ में से अधिकांश प्राइमरी शिक्षा ही

प्राप्त करती हैं। बाल-विवाह तथा पर्दे की सामाजिक कुरीतियाँ उन की उच्च शिक्षा-प्राप्ति में बाधा डालती हैं, इसमें क्रमशः सुधार हो रहा है। गाँवों मे और कहीं कहीं नगरों मे कन्याएँ लड़कों के साथ ही पढ़ती है। पाठको! तुमने कुछ शिक्षा पायी है; और तुम शिक्षा के लाभ समझते हो। क्या तुम देश में स्त्री-शिक्षा के बढ़ाने का प्रयत्न न करोगे? तुम्हारे कोई सगी या रिश्ते मे बहिन-भतीजी आदि हो, तो उसे पढने के लिए उत्साहित करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य के पालन करने से तुम स्त्री शिक्षा के प्रचार मे कुछ-न कुछ सहायक हो सकते हो।

शिक्षा-कृषि—यहाँ कानपुर, नागपुर, और पूसा (बिहार) आदि मे कृषि कालिज है। उनके साथ साथ कृषि-विज्ञान-शाला (तथा प्रयोगशाला) हैं। इनमें अनुभव प्राप्त करने के लिए खेती पर प्रयोग किये जाते है, जिससे नयी-नयी खोज हो, और खेती के रोग दूर करने के उपाय मालूम हो। कृषि-कालिजों मे शिक्षा अंगरेजी भाषा द्वारा दी जाती रही है, अब देशी भाषाओं द्वारा

कुछ शिक्षा मिली हो। भारतवर्ष में अब तक इस शिक्षा का प्रबन्ध बहुत ही कम था। केवल थोड़े से ही नगरों मे सरकार की तरफ से ऐसे स्कूल खुले हुए थे, जिनमें कृषि या दस्तकारी, धातु का काम, जेवर बनाना, जवाहरात का काम, कपड़े और दरी बुनना, मिस्तरी का काम, मिट्टी के खिलौने बनाना तथा लकड़ी लोहे आदि का, या दर्जी का काम, चित्रकारी तथा 'बुक-कीपिंग' (अंगरेजी ढङ्ग का वहीखाता), शौर्टहेंड' (शीघ्र-लेख-प्रणाली) और टाइप करना आदि सिखाया जाता था। अब इन विषयो की शिक्षा की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है। कुछ बड़े-बड़े नगरों में 'मेडीकल' अर्थात् चिकित्सा सम्बन्धी, तथा कानून की शिक्षा के लिए कालिज खुले हुए हैं, जिनसे डाक्टर और वकील आदि निकलते हैं। अध्यापक का कार्य सिखाने के लिए नार्मल स्कूल, तथा ट्रेनिंग स्कूल और ट्रेनिंग कालिज आदि हैं।

बुनियादी शिक्षा—सन् १९३७ ई० में यहाँ प्रान्तों की विशेषतया कांग्रेस-सरकारों ने बुनियादी या आधारभूत (बेसिक) शिक्षा की योजना बनायी।* इसकी मुख्य बातें ये हैं छः सात साल के सब बालको के लिए उनकी मातृभाषा मे सात साल तक मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध हो। शिक्षा का आधार या केन्द्र किसी प्रकार की दस्तकारी हो। शिक्षा के सब विषय (भाषा, गणित, भूगोल, इतिहास, और आलेख्य आदि)

* यह योजना महात्मा गांधी की प्रेरणा से वर्धा (मध्यप्रान्त) में बनी थी। इसे वर्धा-शिक्षा-योजना भी कहते हैं।

उस दस्तकारी के सहारे से सिखाये जायँ। दस्तकारी का चुनाव स्थानीय परिस्थिति को ध्यान मे रख कर किया जाय। प्रयोग के लिए कताई-बुनाई बुनियादी दस्तकारी मानी जाय। इस योजना के अनुसार पहले खूब उत्साह से काम किया गया था, परन्तु सन् १६३६ मे कांग्रेस-सरकारो के त्यागपत्र देने के बाद इस ओर उपेक्षा की जाने लगा। सन् १६४६ से यह कार्य फिर अच्छी तरह किया जाने लगा है। अब समग्र शिक्षा या पूरी तालीम का विचार रखा जाता है—सात वर्ष की उम्र से पहले की पूर्व बुनियादी शिक्षा, ७ वर्ष से १४ वर्ष तक की बुनियादी शिक्षा, चौदह वर्ष से बाद की उत्तर बुनियादी शिक्षा, और इन तीनो के अलावा प्रौढ़ शिक्षा।

शिक्षा विभाग—पाठको! अगर तुम किसी सरकारी स्कूल मे पढ़े हो तो तुमने देखा होगा कि समय-समय पर उसका निरीक्षण करने के लिए एक अफसर आता है। उसे डिप्टी इन्सपेक्टर कहते हैं। वह एक या अधिक सब-डिप्टी-इन्स्पेक्टरो की सहायता से जिले के स्कूलो का निरीक्षण करता है। इन्हे जिला-इन्स्पेक्टर भी कहते हैं। एक डिवीज़न मे कई ज़िला-इन्स्पेक्टर होते है। डिवीज़न या सर्कल भर के मुख्य अफसर को 'इन्स्पेक्टर' कहते है, उसके कुछ सहायक होते हैं, उन्हे एसिस्टेंट 'इन्स्पेक्टर' कहते है। इन्स्पेक्टरो से ऊपर 'डायरेक्टर' होता है, जो एक प्रान्त के शिक्षा-कार्य की देखरेख करता है।

शिक्षा-विभाग के नियम के अनुसार पढ़ाई करानेवाली और उसके कर्मचारियो द्वारा निरीक्षण करानेवाली सरकारी, तथा

म्युनिसिपल और जिला बोर्डों की संस्थाएँ 'पब्लिक' या सार्वजनिक कहलाती हैं। इन्हें छोड़कर आर्यसमाज, ईसाइयो तथा अन्य विशेष सम्प्रदायो की संस्थाओं को 'प्राइवेट' कहते हैं। उनमें प्राय: धार्मिक शिक्षा भी दी जाती है। बहुतसी प्राइवेट संस्थाएँ सरकारी सहायता लेती हैं। उन्हें अपना पाठ्यक्रम निश्चित करने, अपने मकान आदि बनवाने में सरकारी नियमों का पालन करना होता है। सरकारी इन्स्पेक्टर समय-समय पर उनका निरीक्षण करते हैं।

ग़ैर-सरकारी शिक्षा-संस्थाएँ—कुछ स्थानो मे गुरुकुल, ऋषिकुल, और विद्यापीठ आदि प्राचीन ढङ्ग की तथा कुछ आधुनिक ढग की संस्थाएँ है, ये ग़ैर-सरकारी हैं। हिन्दी भाषा मे विविध परीक्षाएँ लेनेवाली संस्थाओ मे हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) अच्छा काम कर रहा है; इसकी परीक्षाओं के लिए देश भर मे सैकड़ो केन्द्र स्थापित हैं। सन् १९४२ में म० गांधी ने वर्धा में हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा कायम की थी। इसकी ओर से हिन्दुस्तानी की परीक्षा की व्यवस्था है, बहुत से स्थानों में उसके परीक्षा-केन्द्र स्थापित है। मदरास आदि प्रान्तो में दक्षिण भारत हिन्दुस्तानी प्रचार सभा खूब काम कर रही है।

निरक्षरता का अन्त करने के उपाय—प्राचीन काल में भारतवर्ष अपने ज्ञान भडार के लिए प्रसिद्ध था। यहाँ प्रत्येक ग्राम में ऐसी पाठशाला, और कुछ खास स्थानों में गुरुकुल और विद्यापीठ आदि थी, जिनमे जनसाधारण के बालक विना कुछ खर्च किये अपने गुरु के पास रहते और यथेष्ट

शिक्षा पाते थे। परन्तु इस समय यहाँ शिक्षित व्यक्ति बहुत कम हैं। सब स्त्री-पुरुष मिलाकर बारह-तेरह फीसदी ही कुछ पढ़ना-लिखना जानते हैं। यह शोभा नहीं देता। दिसम्बर १६३८ में भारत-सरकार के शिक्षा-सलाहकार श्री० सारजेंट ने ४० वर्ष में प्रत्येक प्रौढ़ ❀ व्यक्ति को शिक्षित करने की योजना बनाई थी। वह योजना कुछ चली नहीं। स्वतन्त्र भारत तो ४० वर्ष तक रुका रहना सहन नहीं कर सकता। मत देने के लिए भी २१ वर्ष से अधिक उम्रवाले सभी स्त्री-पुरुषों को शिक्षित बनाना आवश्यक है। यदि जनता मूर्ख है तो वह अपने मत देने आदि के अधिकारों का दुरुपयोग ही करेगी।

शिक्षा-मन्त्री मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने कहा है कि हमारी योजना देश भर में अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने की है। इसे हम पाँच वर्ष में करने का विचार है। इस हालत में प्रत्येक भारतीय को साक्षर करने का कार्य दस वर्ष में पूरा हो जायगा। प्रथम पाँच वर्षों में ऐसा प्रबन्ध किया जायगा कि

क्षेत्रफल को देखते हुए, अन्य देशों की तुलना में, पैदावार बहुत कम है। इसके मुख्य कारण, किसानों की गरीबी तथा अज्ञान हैं। उनके पास प्रायः इतनी पूँजी नहीं होती कि वे नये यंत्र, बढ़िया खाद, उत्तम बीज आदि खरीदकर काम में ला सकें, अथवा खेतो मे पानी देने के लिए कुएँ आदि जितने चाहिएँ, खुदवा सकें। भारतवर्ष में खेती पशुओं की सहायता से होती है, अन्य देशों की तरह यहाँ मशीन तथा वैज्ञानिक आविष्कारो का उपयोग नहीं किया जाता। इसलिए यहाँ पशुओं की रक्षा, उन्नति, और चिकित्सा आदि की विशेष आवश्यकता है। इन बातों का यथेष्ट प्रबन्ध न होने से भी यहाँ खेती गिरी हुई हालत में है। इसके अलावा इस देश के अनेक स्थानों में एक आदमी की थोड़ी सी जमीन एक जगह है, और थोड़ी सी दूसरी जगह, बहुत दूर है। इससे उनमें खेती करना, तथा उनकी देखरेख करना, बहुत कठिन हो जाता है, और खर्च भी अधिक पड़ता है। किसानो तथा जमींदारो को चाहिए कि सरकार की सहायता से खेती की इन असुविधाओं को दूर करने का यत्न करें। सहकारी समितियो से भी बहुत बहुत लाभ उठाया जा सकता है, इनके सम्बन्ध मे आगे सोलहवें पाठ में लिखा है।

कृषि-विभाग—कृषि के उन्नति के लिए भारतवर्ष में एक सरकारी कृषि-संस्था है। अलग अलग प्रान्तो में मन्त्री के अधीन खेती का डायरेक्टर तथा उसके नीचे डिप्टी डायरेक्टर, इन्सपेक्टर और इंजिनियर आदि रहते हैं। कृषि-विभाग के अफसरों के प्रयत्नो से कृषि के सम्बन्ध में—विशेष[illegible]

भिन्न प्रकार की जमीनो मे उचित खादो के उपयोग, अच्छे बीज, पौधो के रोग और उनके निवारण, नयी तरह के औजारो के उपयोग, और नए तरीको से खेती करने के सम्बन्ध में— कई उपयोगी बातों का ज्ञान मिल चुका है। परन्तु सर्व-साधारण में अभीइस ज्ञान का यथेष्ट प्रचार नही हुआ; कारण, उनमें शिक्षा का प्रचार बहुत कम है, और जब तक सरकारी कर्मचारी उन्हे इस विषय को भली भांति समझाने तथा उनकी शंकाओ को दूर करने का विशेष रूप से उद्योग न करें, केवल सरकारी फर्मों या नुमायशों से किसानो को काफी लाभ नही होता। अब इस ओर ध्यान दिया जा रहा है।

किसानों को आर्थिक सहायता—कृषि सम्बन्धी बहुत से सुधार ऐसे है, जिनकी उपयोगिता किसानो की समझ मे अच्छी तरह आ जाने पर भी, वे उनसे समुचित लाभ इसलिए नही उठा सकते कि वे प्रायः बहुत गरीब और कर्जदार है। किसानो को साहूकारो से बहुत अधिक सूद पर रुपया उधार मिलता है। सरकार उन्हे भूमि की उन्नति करने, और पशु, बीज तथा कृषि सम्बन्धी अन्य वस्तुओ को खरीदने के लिए कम सूद पर रुपया उधार देती है। इसे 'तकावी' कहते है। बहुत से किसानो को अपनी अनेक आवश्यकताओ के लिए बहुधा काफी 'तकावी' नही मिल सकती। सहकारी साख-समितियो से उन्हे बहुत लाभ पहुँच सकता है। इनके विषय मे आगे लिखा जायगा। वर्तमान अवस्था मे प्रायः किसानो को सरकारी लगान देने के लिए ही, अपनी उपज का बडा भाग बेच देना होता है।

बेचने में जल्दी करने के कारण, उसके दाम अच्छे नहीं उठते। इसका सुधार, तथा किसानों की आर्थिक उन्नति करने के लिए इस बात की भी बड़ी आवश्यकता है कि लगान की दर में काफी कमी की जाय।

सिंचाई की आवश्यकता—ऊपर बताया गया है कि यहाँ प्रायः किसानों की आर्थिक दशा अच्छी नहीं। इस पर जब बारिश बहुत कम, या बहुत ज्यादा होती है, तो फसल खराब हो जाने से उनका कष्ट बढ़ जाता है। आम तौर से उत्तरी पंजाब, संयुक्तप्रान्त, और मदरास प्रान्त के तट की भूमि में वर्षा कुछ निश्चित नहीं है; और दक्षिण मालवा, गुजरात, सिंध और राजपूताना में वर्षा बहुत कम होती है। इन भागों के किसा

सरकार की बनायी हुई, और उसी के प्रबन्ध मे हैं। यह सिंचाई का सबसे बड़ा साधन है। नहरें निकल जाने पर बंजर भूमि बहुत सुहावनी, हरी-भरी, तथा खूब आबाद हो जाती है; उदाहरण के लिए पंजाब में नहरें निकलने से कई जगह अच्छी सुन्दर नहरी बस्तियाँ ('कालोनी') हो गई हैं। वहाँ पैदावार तथा आबादी पहले से कई गुनी बढ़ गयी है।

भारतवर्ष में कुल मिला कर जितनी भूमि जोती जाती है, उसमें से इस समय केवल पाँचवें हिस्से मे सिंचाई होती है, शेष भूमि का आसरा सिर्फ वर्षा है। नहरें धीरे-धीरे बढ़ रही हैं, परन्तु अभी उनकी आवश्यकता बहुत अधिक है।

सिंचाई का विस्तार—भारतवर्ष के स्वतन्त्र होने के बाद सरकार अपनी इस जिम्मेवरी को अनुभव करती है कि देश मे अन्न आदि यथेष्ट मात्रा मे उत्पन्न हो, भोजन वस्त्रादि के सम्बन्ध मे जनता स्वावलम्वी हो। प्रान्तीय सरकारें सिंचाई के साधनो को बढ़ाने की ओर ध्यान दे रही हैं। उदाहरण के लिए संयुक्त-प्रान्त मे जहां सन १९४६-४७ में २५८ मील लम्बी नहरें बनायी गयी थी, सन् १९४७-४८ में लगभग ६०० मील लम्बी बनाने की योजना है। गोरखपुर, वस्ती और देवरिया जिले में लगभग १०० ट्यूबवेल (पातालफोड़ कुएँ) बनाए जाने वाले है, जिनमें से बिजली द्वारा पानी निकाला जाता है। इन कुओ से लगभग ४५ हजार एकड़ भूमि की सिचाई होगी। इसी तरह अन्य प्रान्तो में सिंचाई का विस्तार हो रहा है।

सिंचाई का महसूल—सिंचाई का महसूल भिन्न-भिन्न

प्रान्तों मे अलग-अलग हिसाब से वसूल किया जाता है। एक प्रान्त में भी सब फसलो के लिए यह महसूल बराबर नही होता, किसी के लिए कम होता है, और किसी के लिए ज्यादह। कही-कही तो यह महसूल लगान के साथ ही, और, कहीं कहीं अलग लिया जाता है।

सिंचाई विभाग—सिंचाई का प्रबन्ध करने के लिए प्रत्येक प्रान्त मे एक सरकारी विभाग है, उसे सिचाई या आबपाशी विभाग कहते हैं। इस विभाग का प्रधान प्रान्तीय अधिकारी 'चीफ इजिनियर' कहलाता है। उसके अधीन एक-एक 'सर्कल' के सुपरिन्टेंडिंग इजिनियर और उससे नीचे एक-एक डिवीज़न के 'एग्जीक्यूटिव इजीनियर' होते है। एग्जीक्यूटिव इंजीनियर के नीचे क्रमशः एसिस्टेन्ट इजिनियर' और ओवरसियर आदि कर्मचारी काम करते है।

बारहवाँ पाठ

सरकारी निर्माण-कार्य

पाठको! तुमने आगरे का ताजमहल देहली की कुतुब-मीनार, या इलाहाबाद का किला देखा होगा। और नहीं तो ऐसी इमारतों का नाम तो सुना ही होगा। ये इमारतें किसकी हैं? ये बादशाहो या राजाओ ने बनवायी हैं। ऐसी इमारतो

के बनवाने मे दो बातो का ध्यान रखा जाता है—या तो यह कि वे बहुत सुन्दर हों अथवा वे बहुत उपयोगी हो। प्राचीन काल मे सौंदर्य का विशेष ध्यान रखा जाता था, आजकल उपयोगिता का विचार अधिक किया जाता है।

पिछले पाठों मे यह बताया जा चुका है कि भारतवर्ष मे सरकार के बहुत से विभाग तथा कार्य है—शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, आबपाशी, पुलिस, अदालतें और जेल आदि। इनके लिए इमारतें आदि बनवाने की जरूरत होती है। इस कार्य के वास्ते प्रत्येक प्रान्त में सरकार का एक अलग ही विभाग है, जिसका नाम है, सरकारी निर्माण-विभाग। इसे अगरेजी मे 'पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट' कहते हैं; इसका सक्षिप्त है पी. डब्ल्यू. डी.। साधारण बोलचाल में बहुधा अंगरेज़ी का यह सक्षिप्त नाम ही काम आता है।

निर्माण-विभाग के काम—सरकारी निर्माण-विभाग इस प्रकार के काम करता है :—

(१) सड़कें बनाना तथा उनकी मरम्मत करना।

(२) सरकारी कामो के वास्ते आवश्यक मकान, स्कूल, अस्पताल, जेल, दफ्तर, अजायबघर, अदालतें, इत्यादि बनाना, और उनकी मरम्मत करना।

(३) सार्वजनिक सुविधा के लिए बन्दरगाह, घाट पुल आदि बनाना।

(४) आबपाशी के लिए नहरें खोदना।

सड़कें—इन कार्यो में सड़कों का भी ज़िक्र हुआ है।

नागरिकों के लिए ये कितनी उपयोगी होती हैं, यह बहुधा सहज ही अनुमान नहीं किया जाता। भिन्न-भिन्न स्थानों के नागरिकों को मिलने-जुलने के प्रसंग जितने अधिक आते हैं, उतना ही उनका आपसी व्यवहार तथा व्यापार आदि बढ़ता है; उन्हें एक दूसरे से अनेक उपयोगी बातों का ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार नागरिकों को आमदरफ्त के साधनों की वृद्धि बहुत आवश्यक है। जिन दो स्थानों के बीच में अच्छी सड़क नहीं होती, वहाँ के लोगों को एक दूसरे से मिलने में बहुत असुविधा होती है।

विभाग का संगठन—प्रत्येक प्रान्त में सरकारी निर्माण-विभाग का प्रधान कर्मचारी 'चीफ इञ्जिनियर' कहलाता है। निर्माण-कार्यों के लिए प्रत्येक प्रान्त कुछ 'सर्कलों' में तथा हर एक 'सर्कल' पाँच-छः 'डिवीज़नों' में, बँटा हुआ होता है। 'सर्कल' भर के कार्यों के निरीक्षण करने का अधिकार 'सुपरिंटेंडिंग इंजिनियर' को होता है, और डिवीज़न एक 'एग्ज़िक्यूटिव इंजि-नियर' के सुपुर्द रहता है। इसके नीचे सहायक इजिनियर, ओवरसियर और सब-ओवरसियर आदि रहते है। भारतवर्ष के स्वतंत्र होने से पहले इस विभाग में काम करनेवाले बड़े-बड़े अधिकारी प्रायः इङ्गलैंड मे शिक्षा पाकर आते रहे। यहाँ रुड़की, शिवपुर (बङ्गाल), मदरास, पूना, बम्बई और जबलपुर आदि में इस विषय की शिक्षा की व्यवस्था है।

तेरहवाँ पाठ

उद्योग धन्धे

पाठको ! इस पुस्तक में कृषि का पाठ पढ़ चुके हो। इसमे सन्देह नही कि हमें भूमि से उत्पन्न अन्न, गन्ना आदि पदार्थों की बहुत आवश्यकता है। परन्तु केवल उन चीज़ो से ही हमारा सब काम नहीं चल जाता। हमे बहुतसी ऐसी चीज़ो की ज़रू-रत होती है, जिनकी खेती नहीं की जाती; जो भूमि से उत्पन्न पदार्थों से भिन्न-भिन्न प्रकार से बनाई जाती हैं। उदाहरण के

लिए हमें पहनने को कपड़े चाहिएँ। भूमि से कपास पैदा की जा सकती है, परन्तु उससे सूत के कपड़े बनाने का काम और भी करना बाकी रहेगा, तब ही हमारी आवश्यकता पूरी हो सकती है। इस प्रकार जगल में वृक्ष पैदा होते हैं, परन्तु उनसे लकड़ी के तख्ते तैयार करने या गोंद, लाख आदि इकट्ठा करने का काम और भी करना होता है। इसी प्रकार सोना चांदी या लोहा आदि जिस रूप में ज़मीन से निकलता है, वह बहुत उपयोगी नहीं होता। उसे बड़ी होशियारी और मेहनत से साफ किया जाता है तब उसकी आवश्यक चीजें बन सकती हैं।

कच्चा और तैयार माल—इससे स्पष्ट है कि भूमि से जो चीजें मिलती हैं, उनमे से बहुतो को व्यवहार मे लाने के लिए हमें तरह तरह के काम करने पड़ते हैं। ये कार्य उद्योग-धन्धे के काम कहे जाते हैं। उद्योग-धन्धो द्वारा 'कच्चे माल' को 'तैयार माल' बनाया जाता है। मिसाल के तौर पर रुई, ऊन, तेलहन, लकड़ी, लोहा आदि कच्चा माल है। उद्योग-धन्धो से इनके कपड़े तेल, कुर्सी, मेज, औज़ार आदि बनते हैं, जिन्हे तैयार माल कहते हैं।

दस्तकारी—प्राचीन काल मे, भारतवर्ष मे दस्तकारियो का बहुत प्रचार था। खेती की उपज के अलावा लोगो को जिन-जिन चीजो की जरूरत होती थी, उन्हें भी वे यहाँ ही बना लेते थे। उस समय यहाँ से बहुत सा बढ़िया-बढ़िया तैयार माल विदेशो में बिकने जाता था। दस्तकारियो के कारण भारतवर्ष का दर्जा अन्य देशो से कहीं ऊँचा था। पर अब वह

रही। जब से कल-कारखानो की लहर चली है, यहाँ बहुत सा माल विदेशो से आता है। कुछ माल यहाँ भी कल-कारखानों मे बनता है।

तुम जानते हो कि यहाँ किसान बहुत गरीब है, उनके लिए खेती की पैदावार प्राय: काफी नहीं होती। इसके सिवाय खेती का काम लगातार साल भर नही रहता। किसानो का जो समय खेती से बचता है, वह प्राय: बेकार जाता है। यदि वे अपने अवकाश के समय को दस्तकारी में लगावें तो उनके उस समय का सदुपयोग भी हो और उन्हे कुछ आमदनी भी हो। भारत-वर्ष मे दस्तकारियो के लिए बड़ी सुविधा है। यहाँ हर तरह का कच्चा माल बहुतायत से पैदा होता है। परन्तु हम उससे तैयार माल नहीं बनाते। बहुतसा कच्चा माल विदेशो को भेज दिया जाता है। वहाँ वाले उसका तैयार माल बनाते हैं, फिर हम अपनी जरूरत के लिए उसे उनसे, भारी मूल्य पर खरीदते हैं। यदि भारतवासी दस्तकारियों और उद्योग-धन्धो की ओर यथेष्ट ध्यान दें तो इस देश को बड़ा लाभ पहुँचे।

भिन्न-भिन्न स्थानो के लिए अलग-अलग दस्तकारियाँ उप-योगी हो सकती हैं। सूत कातना और कपड़ा बुनना एक ऐसा काम है, जिसकी हर जगह ज़रूरत होती है। यह काम बहुत आसानी से किया जा सकता है। इसको शुरू करने में, और आवश्यकता होने पर इसे छोड़ देने मे, कुछ कठिनाई नही होती। इसलिए किसानो के वास्ते यह दस्तकारी विशेष रूप से उपयोगी है। सहकारी समितियो का विस्तार होने से देश की दस्तकारियो

की बहुत उन्नति हो सकती है। इन समितियों के विषय में आगे लिखा जायगा।

कल-कारखाने--निदान, दस्तकारियों की तरफ अधिक ध्यान देना आवश्यक है। परन्तु इसका यह मतलब नहीं, कि देश में कल-कारखाने बिल्कुल हो ही नहीं। अब तो इन-का ही जमाना है, बड़ी-बड़ी मशीनों द्वारा, खूब बड़े पैमाने पर, भाप या बिजली आदि की सहायता से, तरह-तरह की बहुत सी चीजें तैयार की जाती हैं। इस युग में मशीनों से बचना बहुत मुश्किल है। जरूरत की चीजों में बहुत सी ऐसी हैं, जो मशीनों के बिना तैयार ही नहीं हो सकतीं। इसके अलावा, जो चीजें तैयार हो सकती हैं, वे कल-कारखानों

कारण अब बस्तियाँ बड़ी घनी हो गयी हैं। धुआँ बहुत रहता है। मकानो का किराया बढ़ता ही जाता है। साधारण आमदनी वाले मजदूरों को बहुत तग जगह में निर्वाह करना पड़ता है, उसकी आवहवा भी अच्छी नही होती। इससे उनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। वे रोगी और दुर्बल हो जाते हैं। सत्सङ्ग न मिलने से वे मद्यपान आदि की बुरी आदतों के शिकार होते हैं। बहुत से मजदूरों को बहुत समय तक अपने घर-गृहस्थी से दूर रहना पड़ता है। उनके बाल बच्चों की सार-सँभार नही होती। उनका परिवारिक सुख बहुत-कुछ नष्ट हो जाता है।

मजदूरों और पूँजीपतियों का विरोध—इसके अलावा एक बात और है। कल-कारखानों में यद्यपि श्रम और पूँजी दोनो सहायक होते है, परन्तु श्रम करनेवालो और पूँजी लगानेवालों का प्राय. आपस में विरोध रहता है। मजदूर सोचते हैं कि हमे अपने काम के बदले जितनी अधिक मजदूरी और सुविधाएँ मिलें; उतना ही अच्छा है। दूसरी ओर कारखाने वाले विचारते हैं, कि हमें मजदूरो के वेतन आदि में खर्च जितना कम करना पड़े, उतना ही उत्तम है। प्रत्येक अपने स्वार्थ को देखता है, तो आपस में विरोध होनेवाला ही ठहरा। दोनो पक्ष सफलता के लिए अपनी शक्ति बढ़ाने का उद्योग करते हैं, और, इसी लिए अपना संगठन करने की फिक्र मे रहते हैं।

हड़ताल—पहले मजदूरो की बात लें। जहाँ कारखाने में सैकड़ो और हजारो मजदूर काम करते हैं, वहाँ दो चार, या

दस-बीस के काम छोड़कर चलेजाने से, कारखाने की विशेष हानि नही होगी; मालिक पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पडेगा। इसलिए मजदूर इकट्ठे मिलकर, मालिक को पहले से सूचना अर्थात् 'नोटिस' देकर, एकसाथ काम छोड़ते हैं। इसे हड़ताल करना कहते हैं। हड़ताल के समय अपनी जरूरतो को पूरा करने के लिए, वे पहले से थोड़ी-थोड़ी रक़म जमा करके एक कोष जमा कर लेते है। जिनके पास ऐसा कोष नहीं होता, उनकी हड़ताल सफल नहीं हो सकती। कभी-कभी हड़ताल सफल न होने का कारण यह भी होता है कि मजदूरो मे फूट हो जाती है; कुछ मजदूर मालिको से शिकायतें दूर कराने से पहले ही, काम पर जाने को तैयार हो जाते हैं; अथवा, उस नगर के या बाहर के अन्य मजदूर वहाँ आ जाते है। इस विचार से, जो लोग हड़ताल करते हैं, वे कोशिश करते हैं कि उनकी जगह काम करने के लिए दूसरे मजदूर न आ सकें। जो आना चाहते हैं, उन्हे वे रोकते हैं, और, उन पर वे कई प्रकार का दबाव डालते हैं। इससे कई बार उपद्रव होने की आशङ्का होती है।

द्वारावरोध—जिस प्रकार मजदूर संगठित होकर हड़ताल द्वारा कारखाने के मालिको से अपनी वेतनादि की शर्तें पूरी कराना चाहते हैं, उसी प्रकार जब कारखानेवाले समझते हैं कि हम मजदूरो से कम वेतन पर काम करा सकते है, तो वे आपस मे सलाह करके मजदूरो को नोटिस दे देते हैं कि अमुक दिन से, तुम्हारी गरज हो तो इतनी मजदूरी पर, इतने घटे काम करना, अन्यथा यहाँ मत आना। यदि मजदूर ये शर्तें नहीं

मानते तो मालिक अपने कारखाने का फाटक बन्द करके उनका आना रोक देता है। इसे द्वारावरोध (दरवाज़ा बन्द करना) या तालाबन्दी ('लाक आउट') कहते हैं। मजदूर प्रायः गरीब होते ही हैं; इसके अतिरिक्त, यदि उनमे संगठन भी न हो तो पूँजीपतियों के सामने उनकी हार निश्चित ही समझनी चाहिए।

विरोध कैसे हटे?—हड़ताल और द्वारावरोध दोनों आजकल कारखानो के युग मे साधारण बात हो गयी हैं; मज़दूर और पूँजीपतियो को बराबर यह चिन्ता लगी रहती है, कि कहीं दूसरा पक्ष हमसे अधिक बलवान न हो जाय। प्रत्येक अपना-अपना स्वार्थ सिद्ध करना और दूसरे को हराना चाहता है। कोई दूसरे की भलाई नहीं देखता। उधर, हड़ताल हो या द्वारावरोध, उससे धनोत्पत्ति का काम तो रुक ही जाता है; इससे देश की बड़ी हानि होती है।

इस ओर स्वतंत्र भारत की सरकार ने विशेष ध्यान दिया। दिसम्बर १९४७ में दिल्ली मे औद्योगिक सम्मेलन हुआ, उसमें यह समझौता कराने का विचार किया गया कि औद्योगिक क्षेत्रो में अभी कम से कम तीन साल शान्ति बनायी रखी जाय। उस सिलसिले में एक केन्द्रीय श्रम-सलाहकार समिति तथा प्रान्तों में प्रान्तीय समितियाँ नियुक्त करने का निश्चय किया गया। ये समितियाँ उद्योग और श्रम सम्बन्धी मुख्य-मुख्य प्रश्नो यथा मजदूरों का उचित पारिश्रमिक, उन्हे मिलने योग्य सुविधाएँ और मुनाफे मे हिस्सा आदि—पर विचार करेंगी। ऐसी समितियाँ निष्पक्ष और विचारपूर्ण निर्णय दें,

और उन निर्णयो को सच्चाई और लगन के साथ अमल मे लाया जाता रहे तो श्रमजीवी और पूंजीपतियो का आपसी विरोध हटने और औद्योगिक विकास होने मे बहुत सहायता मिले। इस समय उत्पादन बढ़ाने की बहुत ही आवश्यकता है, इसलिए मजदूरों की हड़तालें सरकार द्वारा अवैध घोषित की हुई हैं।

कारखाना-क़ानून—सरकार कल-कारखानो की बुराइयाँ रोकने के लिए क्या करती है? भारतवर्ष के कारखाना-कानून की कुछ मुख्य-मुख्य बातें ये हैं :—

जिन कारखानों में मशीन से काम होता हो, और बीस या अधिक आदमी काम करते हो, उसमे यह कानून लागू होता है। किसी मजदूर से बारहमासी कारखानो में एक सप्ताह में ४८ घन्टे और एक दिन में ६ घन्टे से अधिक काम नहीं लिया जा सकता। सप्ताह में एक दिन छुट्टी रहनी चाहिए। बारह वर्ष से कम उम्र के बालको को काम पर नहीं लगाया जा सकता। पन्द्रह वर्ष से कम उम्रवालो से छः घन्टे से अधिक श्रम नही कराया जा सकता। स्त्रियों तथा लडको से रात्रि मे काम कराने का निषेध है। मशीन के चारों ओर घेरा या बाढ़ रहनी चाहिए। कारखानो में पानी, रोशनी हवा सफाई आदि का सुप्रबन्ध होना चाहिए।

होता। कुछ कारखानेवाले इन बातों की ओर क्रमशः ध्यान दे रहे हैं, अभी और बहुत से प्रयत्नों की आवश्यकता है।

ग्राम उद्योग संघ—दस्तकारी मे बहुत सी समस्याएँ पैदा नहीं होतीं, जो कल-कारखानो में अवश्य होती हैं। उनका काम करनेवाले अपने परिवार के अन्य आदमियो के साथ रहते हैं, वे मद्यपान और विलासिता से मुक्त रहते हैं। पूँजीपति और मज़दूरो का संघर्ष भी नही होता। भारतवर्ष में दस्तकारो का संगठन बहुत कम है। हाँ, सन् १६२५ ई० से अखिल भारतवर्षीय चर्खा-सघ हाथ की कताई और बुनाई का कार्य उत्तरोत्तर बढ़ा रहा है। सन् १६३४ई० से अखिल भारतवर्षीय ग्राम-उद्योग संघ भी विविध उद्योगों की उन्नति मे लगा हुआ है। इनका प्रधान कार्यालय वर्धा (मध्यप्रान्त) में, और शाखाएँ जगह-जगह हैं।

सरकारी औद्योगिक नीति—सरकारी नियंत्रण की दृष्टि से उद्योग धंधो की अब तीन श्रेणियाँ हैं। बड़े-बड़े बिजली पैदा करनेवाले, रसायन बनानेवाले, सीमेंट के कारखाने तथा यातायात के साधन सरकारी होंगे और सरकार उनका प्रबन्ध करेगी। दूसरी श्रेणी में ऐसे उद्योग धधे होंगे जिन पर, सरकार बड़े परिमाण में हिस्से खरीद कर, तथा संचालक-बोर्ड में प्रभावशाली स्थान प्राप्त करके, नियंत्रण रखेगी। बाकी के उद्योग धधे व्यक्तिगत रूप से किये जाने के लिए खुले रहेंगे।



चौदहवाँ पाठ

व्यापार



पाठको! रेलों का पाठ तुम पढ़ चुके हो; उनसे व्यापार में कैसी सहायता मिलती है, यह तुम जानते हो। प्राचीन काल में रेल नही थी; डाक तार की तरह के समाचार भेजने के साधन भी नही थे। इसलिए, उस समय भिन्न-भिन्न देशो के निवासियो का आपस में इतना सम्बन्ध नहीं था। पहले प्रायः प्रत्येक गाँव (या नगर) के आदमी आवश्यक पदार्थों को वहीं मोल ले लेते थे। यदि कभी किसी ऐसी चीज की जरूरत होती थी, जो उनके निवास-स्थान में न मिले तो वे उसे बाजार या हाट के दिन, पास के दूसरे गाँव या नगर से, ले आते थे। जो चीजें वहाँ भी न मिलतीं, वे तीर्थ-यात्रा आदि के समय, भारतवर्ष के ही, दूसरे स्थानों से लायी जाती थी।

यद्यपि प्राचीन काल मे भी भारतवर्ष का तैयार माल मिस्र और रोम आदि पश्चिमी देशो के बाजारो में जाता था, अब यहाँ के देशी और विदेशी व्यापार में बहुत वृद्धि हो गयी है। परन्तु यहाँ अब अन्य देशो से बहुत सा तैयार सामान आता है और अधिकांश मे कच्चा माल बाहर जाता है। अस्तु, नयी-नयी वैज्ञानिक खोज और आविष्कारो से व्यापार में बहुत सुविधा हो गयी है। स्मरण रहे कि व्यापार एक समाज-सेवा का कार्य है; मुनाफेखोरी

या बेईमानी करके धन संग्रह करना इसका उद्देश्य नहीं होना चाहिए।

व्यापार के साधन—व्यापार के तीन मार्ग हैं—स्थल मार्ग, जल-मार्ग और वायु-मार्ग। स्थल मार्ग में कच्ची पक्की सड़कों पर, ठेलों, गाड़ियों, पशुओं, मोटरों आदि से माल जाता है। आधुनिक व्यापार-वृद्धि मे रेलो से बड़ीसहायता मिल रही है। जल-मार्ग में नदियो, नहरो और समुद्रो में नाव स्टीमर और जहाज चलते हैं। युद्ध-काल में, पनडुब्बियो द्वारा, पानी के नीचे-नीचे भी माल ढोया जाता है। वायु-मार्ग से व्यापार थोड़े ही समय से किया जाने लगा है। हवाई जहाजो द्वारा अभी कहीं-कही थोड़ा-थोड़ा माल पहुँचाया जाता है, आगे इसमे वहुत उन्नति की सम्भावना है। डाक, तार, टेलीफोन, और बेतार-के-तार द्वारा एक जगह से दूसरी जगह व्यापार सम्बन्धी समाचार भेजने का काम बड़ी आसानी से और जल्दी ही हो जाता है, और इससे व्यापार खूब बढ़ता है। डाक से तो छोटे छोटे पार्सल या पेकेट आदि भी भेजे जाते हैं। व्यापार में जो लेन-देन होता है, उसमें बैङ्को से बड़ी सहायता मिलती है, इनके विषय मे आगे लिखा जायगा।

व्यापार की वृद्धि के लिए इन सब साधनो की उन्नति होना आवश्यक है। यह काम अधिकतर सरकार के ही करने का होता है। भारतवर्ष मे सरकार द्वारा जो काम हो रहा है, उसका वर्णन पिछले पाठो में हो चुका है। बीमे के बारे मे कुछ बातें यहाँ बतायी जाती है।

बीमा—डाकखाने के पाठ मे तुम पढ़ चुके हो कि चिट्ठियां, पार्सल और हुंडियाँ आदि भेजते समय उनकी रक्षा या हिफाजत के लिए फीस देकर उनका बीमा कराया जा सकता है। व्यापार में बहुधा बहुत संदेह और जोखम रहती है। कहीं कोई जहाज डूब न जाय, या उसमें आग न लग जाय, इस विचार से उनका बीमा कराने की व्यवस्था होती है। अगर बीमा किया हुआ कोई जहाज डूब जाय, या किसी मकान या कारखाने आदि में आग लग जाय, तो उसका बीमा करनेवाली कम्पनियाँ उसके मालिक को उतनी रकम दे देती हैं, जितने का बीमा होता है। जिन्दगी का बीमा कराने के विषय मे, तुम्हे अगले पाठ में बताया जायगा। आजकल बीमा करना एक रोजगार है, और बीमा-कम्पनियाँ इस काम को अपने फायदे के लिए करती हैं।

तोल और माप—व्यापार करने के लिए मुद्रा (रुपए-पैसे) तथा तोल और माप का होना आवश्यक है। यदि किसी देश में ये भिन्न-भिन्न प्रकार के हों तो वहां के आदमियो को आपस में व्यापार करने में बड़ी असुविधा होती है, और धोखा भी हो सकता है। मुद्रा का वर्णन तो अगले पाठ मे किया जायगा, तोल और माप का विचार यहाँ किया जाता है। भारतवर्ष मे सार्वजनिक व्यवहार में तोल के लिए सेर काम में लाया जाता है। यद्यपि कहीं-कहीं सेर कुछ कम या ज्यादह वजन का भी होता है, यहाँ अधिकतर अस्सी तोले के सेर का ही चलन है। आम तौर पर सब चीजों का वजन सेर में किया जाता है। भारी

नम्बर अपने पास लिख रखें।

अच्छा, रुपए-पैसे होते हुए नोट क्यों चलाए जाते हैं। बात यह है कि बड़े व्यापार में सोने चाँदी के बहुत से सिक्के एक स्थान से, किसी दूसरे दूर के स्थान पर लेजाने में बड़ी असुविधा प्रतीत होती है। इस असुविधा को दूर करने के लिए लोगों को क्रमशः धातुओ का आधार छोड़कर, कागजी मुद्रा अर्थात हुंडियो या नोटो से काम निकालने की सूझी। नोट सरकार बनाती है, और हुंडियाँ व्यापारी या महाजन लोग, अपने आपस के व्यवहार के लिए चलाते हैं। कागजी मुद्रा वास्तव मे सिक्का नही है, यह केवल एवजी सिक्का है, जो चलानेवाले के विश्वास या साख पर चलता है। इसे कोई उसी दशा मे स्वीकार करता है, जब उसे यह निश्चय होता है कि आवश्यकता होने पर, उसे इसके एवज या बदले मे, इस पर लिखे मूल्य के सिक्के मिल जायँगे।

हुंडियो का चलन तो यहाँ के व्यापारियो में बहुत समय से है, पर नोटो का चलन अगरेजो के समय में ही हुआ है। हुंडियो की अपेक्षा नोट दूर-दूर तथा बहुत आदमियो में चलते है। कारण, कि नोटों को सरकार चलाती है, और सरकार को देश के सब आदमी जानते हैं; सब का उस पर विश्वास होता है, इसलिए कोई उन्हें लेने से इनकार नहीं करता। हाँ, एक राज्य के नोटों का दूसरे राज्य में कुछ मूल्य नहीं होता। आवश्यकता से अधिक होने पर तो नोट अपने राज्य में भी चलने कठिन हो-जाते हैं।

बैंक—तुम्हे यह भी जान लेना चाहिए कि रुपया-पैसा कहाँ और कैसे जमा हो सकता है, जिससे वह सुरक्षित रहे, उसके चुराए जाने आदि का भय न हो, तथा ज़रूरत होने पर वह मिल भी सके। जो संस्थाएँ लोगो का रुपया जमा करती हैं और उनकी आवश्यकतानुसार देती हैं, उन्हे बैंक कहते हैं। बैंको का नाम तुमने सुना ही होगा। इनसे केवल हमारा जमा किया हुआ रुपया ही नहीं मिलता, उस रुपए का सूद भी मिलता है। फिर, जिन आदमियो का वहाँ रुपया जमा न हो, वे भी विश्वास-पात्र होने की दशा में, बैंकों से रुपया उधार ले सकते हैं।

बैंकों का काम—पाठको! सम्भव है, तुम्हारे शहर या गाँव मे कोई बैंक, या उसकी कोई शाखा हो। तुम जानते ही हो कि महाजन लोग बहुधा-कोई जेवर आदि गिरवी रखकर, कागज़ लिखवाकर किसानो या मजदूरो आदि को ब्याज पर रुपया उधार दिया करते है। बैंक भी ऐसा ही करते हैं, परन्तु महाजन केवल उधार देते है, वे लेते शायद ही कभी हैं; और बैंक ब्याज पर रुपया लेते भी रहते हैं। इस प्रकार बैंकों का काम रुपया उधार लेना, उधार देना, हुंडी पुर्जे आदि खरीदना,

रुपया-पैसा; विनिमय का माध्यम—पदार्थों का यह अदल-बदल हर जगह और हर समय सुभीते से नहीं हो सकता। सम्भव है, जो वस्तु हम देना चाहें उसकी दूसरे को जरूरत न हो, अथवा यदि उसे जरूरत भी हो तो उसके पास हमारी जरूरत की चीज़ न हो। उदाहरण के लिए कल्पना करो कि हमारे पास सेर भर गुड़ है, हम उसे देकर नमक लेना चाहते हैं। अब हमें ऐसे आदमी की तलाश करनी है, जिसे गुड़ की जरूरत हो और जिसके पास हमे देने के लिए नमक हो। ऐसा आदमी हर समय आसानी से नहीं मिल सकता। यदि किसी आदमी को गुड की ज़रूरत है परन्तु उसके पास नमक नहीं है, और रूई है, तो उससे हमारा काम नहीं चलेगा। यदि हम उससे रूई ले लेंगे, तो हमें ऐसे आदमी को तलाश करना होगा जो हमसे रूई लेले और बदले में हमें नमक दे सके। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि चीज़ो के अदल बदल में बड़ी कठिनाई होती है। इसे दूर करने के लिए मुद्रा या रुपए पैसे से काम चलाने की बात सोची गई। जो वस्तु हमें देनी हो, उसे बेचकर हम रुपया ले लेते हैं, और फिर उस रुपए से, जिस चीज की हमें जरूरत होती है वह मोल ले लेते हैं। यदि रुपया न हो, तो माल लेने और देनेवाले आदमियों को बड़ी झंझट रहे। रुपया उनके बीच में, पड़कर, उसे दूर कर देता है। यह एक प्रकार के बिचवई, मध्यस्थ या माध्यम का काम देता है।

माल की खरीद-बेच (क्रय-विक्रय) को 'विनिमय' कहते हैं। विनिमय का अर्थ बदला करना है, परन्तु अब यह शब्द उसी

अदल-बदल के काम के लिए उपयोग किया जाता है, जहाँ रुपए-पैसे से काम लिया जाय। अतः रुपए-पैसे को 'विनिमय का माध्यम' कहा जाता है।

भारतवर्ष में पहले सरकार जनसाधारण से सोना-चाँदी और ढलाई-खर्च लेकर उनके वास्ते सिक्के ढाल देती थी। परन्तु सन् १८९३ से यह बात नहीं रही। अब सरकार को जितने सिक्कों के ढालने की आवश्यकता मालूम होती है, उतने वह स्वयं ढालती है।

नोट अर्थात् कागजी मुद्रा—पाठको! तुमने नोट देखा ही होगा। सम्भव है, तुमने नोट देकर कोई चीज़ मोल ली हो। नोट एक प्रकार का कागज ही होता है, पर उस कागज में और साधारण कागजों में फरक होता है। नोट पर विशेष प्रकार की सरकारी छाप होती है, उस पर एक खास नम्बर होता है, तथा उसमें यह छपा रहता है कि सरकार इस बात की प्रतिज्ञा करती है कि वह इस कागज के बदले में उस पर लिखी हुई रकम की देनदार है।* इसलिए उस कागज की इतनी कीमत होती है।

वस्तुएँ मन या पसेरी आदि में तोली जाती हैं। इसी प्रकार साधारणतः माप के लिए गज काम में लाया जाता है। एक गज़, दो हाथ या छत्तीस इंच का होता है। भारतवर्ष बहुत बड़ा देश है; इसलिए अलग-अलग प्रान्तो मे तोल और माप मे कुछ भिन्नता होनी स्वाभाविक है। तथापि ऊपर बताए हुए 'सेर' और 'गज़' का प्रचार होने से समस्त देश के व्यापार में बड़ी सुविधा हो गई है।

व्यापार-नीति—विदेशों से व्यापार करने में किस प्रकार की नीति वर्ती जाय, इसका निश्चय सरकार करती है। यह नीति भिन्न-भिन्न समय में तथा भिन्न-भिन्न वस्तुओ के सम्बन्ध में बदलती रहती है। कभी-कभी किसी देश की सरकार कुछ विदेशी वस्तुओं पर ऐसा कर लगा देती है जिससे वे इतनी महँगी हो जायँ कि उस देश में उनकी खरीद बिलकुल न हो सके, अथवा बहुत ही कम हो सके, और, इस प्रकार वहाँ के स्वदेशी उद्योग धंधों की उन्नति में सहायता पहुँचे। इसे संरक्षण ('प्रोटेक्शन') नीति कहते हैं। इस नीति को व्यवहार में लाने-वाली सरकार कभी-कभी अपने देश के कला-कौशल और उद्योग धंधो के लिए कारखानेवालो को पुरस्कार या सहायता भी देती है। इसे अंगरेजी में 'बाउंटी' कहते हैं। जिन देशो के उद्योग-धन्धे गिरी हुई हालत में हों, उन्हे संरक्षण नीति से बड़ा लाभ होता है।

जिन देशों में उद्योग-धन्धे उन्नत अवस्था में हों, जो विदेशी माल का मुकाबिला आसानी से कर सकते हों,

वहाँ सरकार कर लगाने मे स्वदेशी या विदेशी वस्तुओ मे कोई भेद-भाव नहीं रखती; जैसे अपना माल अन्य देशो को स्वतन्त्रता-पूर्वक जाने दिया जाता है, वैस ही दूसरे देशो का माल अपने देश मे बे-रोकटोक आने दिया जाता है। इस प्रकार की नीति को 'मुक्त व्यापार' या 'फ्री ट्रेड' नीति कहते हैं। भारतवर्ष के उद्योग-धन्धे उन्नत अवस्था मे नहीं हैं, तथापि यहाँ इङ्गलैंड की तरह प्राय. मुक्त व्यापार-नीति ही काम मे लाई जाती रही है। इसमें अभी तक विशेषतया यह ध्यान रखा गया है कि इङ्गलैंड को हानि न पहुँचे। वहुत आन्दोलन होने पर पिछले वर्षों मे कपड़े, लोहे, फौलाद कागज और चीनी को सरक्षण मिला है। अब भारतवर्ष स्वतन्त्र है और यहाँ सरकार अपनी व्यापार-नीति जैसी चाहे रख सकती है। अब तुम समझ गए होगे कि व्यापार-नीति के दो भेद हैं—संरक्षण नीति और मुक्तव्यापार नीति। इनके विषय में विशेष बातें तुम पीछे जान सकोगे।

पन्द्रहवाँ पाठ

रुपया पैसा और बैंक



पाठको! तुम्हें भोजन वस्त्र, कागज कलम, किताब, औजार आदि कुछ ऐसी वस्तुओ की भी आवश्यकता होती है, जो दूसरो की वनाई हुई हो। ये वस्तुएँ तभी मिल सकती हैं, जव तुम उनके वदले मे अपनी चीज दो। समाज में रहनेवालों का इस अदल-वदल के विना गुजारा नहीं होता।

प्रत्येक वैङ्क में रुपया जमा करने तथा उसमें से लेने के कुछ नियम होते हैं। जो रुपया चालू हिसाव में जमा किया जाता है (जिसे जमा करनेवाला जब चाहे ले सके), उस पर सूद बहुत कम मिलता है, और जो रुपया किसी खास मुद्दत (साल छ: महीने) के लिए जमा किया जाता है, उस पर सूद अधिक मिलता है, क्योंकि बैंकवाले उसे किसी स्थायी काम में लगाकर उससे अधिक लाभ उठा सकते हैं।

भारतवर्ष के बैंक—भारतवर्ष मे कई प्रकार के बैंक हैं, रिजर्व बैङ्क, इम्पीरियल बैंक, एक्सचेंज बैङ्क, 'जोयन्ट स्टाक' या मिश्रित पूँजी के बैङ्क, सेविंग बैंक तथा 'कोआपरेटिव' या सहकारी बैंक। इस पाठ में तुम्हें सेविंग बैंको का हाल बताया जायगा। सहकारी बैंको के विषय मे, अगले पाठ में लिखा जायगा। अन्य प्रकार के बैङ्कों की बातें तुम्हे पीछे ज्ञात हो जायँगी।

भारतवर्ष में बैंको की संख्या तथा कार्य धीरे-धीरे बढ़ रहे हैं, तथापि अभी बैंक बहुत कम हैं। यहाँ ऐसे बैंको की बहुत ही जरूरत है, जिनका काम खास तौर से खेती तथा शिल्प की उन्नति करना, हो। नागरिकों को इनकी स्थापना तथा प्रचार में सहयोग करना चाहिए।

सेविंग बैंक—पाठको! डाक और तार के पाठ में तुम पढ़ चुके हो कि डाकखानों मे सेविंग बैंक का भी काम होता है, वहाँ आदमी अपनी बचत का रुपया आसानी से जमा कर सकते हैं। सम्भव है, तुम्हारी भी कुछ रुपया जमा कराने की इच्छा हो,

इसलिए इनके मुख्य-मुख्य नियम यहाँ दिए जाते हैं; अन्य बातें डाकखाने से मालूम हो सकती है।

१—कोई आदमी, अपने नाम से या अपने किसी रिश्तेदार या नौकर आदि के नाम से, अलग-अलग खाता खोल सकता है।

२—नाबालिग लड़के भी अपने नाम से रुपया जमा करा सकते हैं; उन्हें रुपया वापिस लेते समय दूसरे आदमी की गवाही या शहादत करानी होती है।

३—एक बार में कम से कम ।) तक जमा किया जा सकता है।

४—कोई मनुष्य ५,०००) रुपए तक जमा कर सकता है, वह चाहे तो एक ही बार में इतनी रकम जमा कर सकता है।

५—एक सप्ताह में, सोमवार से लेकर शनिवार तक, रुपया केवल एक बार वापिस मिल सकता है; हाँ, जमा तो तुम हर रोज करा सकते हो।

यह बीमा कराना चाहे, उसे चाहिए किसी अच्छी बीमा-कम्पनी के एजंट से मिलकर सब बातें मालूम करले। उसे निश्चित किए हुए समय पर अपनी किस्त का रुपया देते रहना होगा। एक किस्त साल, छः महीने, तीन महीने या एक-एक महीने की हो सकती है। सब के लिए किस्त की रकमें बराबर नहीं होती; बीमे की रकम तथा जमा करनेवालों की उम्र और सुभीते के अनुसार, छोटी-बड़ी होती हैं। जिन लोगो की थोड़ी आमदनी है, वे भी कोशिश करके किस्त के लिए कुछ बचत कर सकते हैं। बीमे की मियाद पूरी होने पर बीमा करानेवाले को, बीमे की इकट्ठी रकम मिल जाती है। इसके सिवाय उसे जैसा नियम हो, कुछ मुनाफे या सूद की रकम भी मिलती है।

बैंक मे भी तो बचत का रुपया जमा हो सकता है, और उस पर भी सूद मिल सकता है, फिर बीमा कराने में विशेष लाभ क्या है? देखो, बैंक में रुपया जमा कराना तो तुम्हारी इच्छा पर रहता है। मानलो तुमने एक बार कुछ रुपया जमा करा दिया, फिर तुम्हें कोई कहनेवाला नहीं, कि इतने समय में इतना जमा करना ही चाहिए। परन्तु बीमे में यह बात नहीं है। उसमें तो किस्त का समय होने पर तुम्हे जमा कराना ही होगा, नही तो पहला जमा किया हुआ रुपया डूबने की शंका रहेगी। इस भय से, जैसे बनेगा, तुम उसके लिए बचत करोगे।

बीमे में एक विशेषता और है। बैंक का रुपया तो तुम चाहे जब वापिस ले सकते हो। इसलिए यह भी सम्भव है कि

तुम्हारे पास बड़ी रकम होने ही न पाए। परन्तु बीमे मे यह नही होता; उसमे तो मियाद पूरी होने पर, तुम्हे पूरी रकम मिलेगी। एक बात और भी है। बैंक मे तो जितना रुपया किसी का जमा होगा, उतना ही वह लेने का हकदार होगा। परन्तु बीमे में यह बात है कि अगर बीमा करानेवाला बीमे की मियाद से पहले ही मर जाय तो जितने का उसने बीमा कराया हो, वह पूरी रकम उसके बाल-बच्चों को मिलेगी; यह नही कि जितना जमा हुआ हो, सिर्फ उतना ही मिले। मानलो किसी ने बास साल के लिए दो हजार रुपए का बीमा कराया तो हर साल उसे सौ रुपए से कुछ कम जमा कराना होगा; अब अगर दो साल मे ही उसकी मृत्यु हो जाय तो जमा तो दो सौ रुपए से कम हुआ, पर उसके बालबच्चे पूरी दो हजार की रकम, बीमा-कम्पनी से, ले सकेंगे।

सोलहवाँ पाठ

सहकारी समितियाँ

सहकारिता—पहले बताया जा चुका है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। प्राय. आदमी मिल-जुलकर गाँवो या नगरो मे रहते हैं। मनुष्यो में आपसी सहयोग या सहकारिता का भाव जितना अधिक होता है, उतना ही वे अधिक उन्नति कर सकते

हैं। भारतवर्ष मे अति प्राचीन काल से लोगो मे इसका व्यवहार है। कुछ गाँवो में सब किसान मिलकर एक या दो कोल्हू मोल या किराए पर ले लेते हैं, और बारी-बारी से ईख पेर लेते हैं। कहीं कही कई-कई किसान मिल कर खेती करते हैं, और फसल को. अपने श्रम या बैलो के उपयोग के हिसाब से, बाँट लेते हैं। कहीं-कही तालाब खोदने, सड़क, मंदिर. धर्मशाला आदि बनाने तथा इनकी मरम्मत का काम भी मिलकर किया जाता है। पचायती मदिर आदि की प्रथा अभी तक प्रचलित है, उससे भी सहकारिता का परिचय मिलता है।

सहकारी समितियाँ—पारस्परिक सहयोग या सहकारिता का भाव रखकर जो समितियाँ बनाई जाती हैं. उन्हें सहकारी समितियाँ कहा जाता है। हमे विविध वस्तुओं को आवश्यकता होती है, इसलिए वे वस्तुएँ पैदा की जाती हैं, या बनाई जाती हैं, यह पहले समझाया जा चुका है। जो लोग वस्तुएँ उत्पन्न करते हैं, वे उत्पादक कहे जाते हैं; और जो उनका खर्च या उपभोग करते हैं, वे उपभोक्ता। उत्पादक और उपभोक्ता ये दोनो समूह अपनी सहकारी समिति बना कर बहुत लाभ उठा सकते हैं। उत्पादक-सहकारी समिति का उद्देश्य यह रहता है कि माल पैदा करने में खर्च कम-से-कम हो, उसमे हर तरह की किफायत की जाय और पीछे उसे अच्छे दामो में बेचा जाय, जिससे मुनाफा अधिक से-अधिक हो। उपभोक्ता सहकारी-समिति का उद्देश्य यह होता है कि वस्तुओ को कम-से-कम मूल्य मे खरीदें; जहाँ से वे सस्ती मिल सकें, वहाँ से ही खरीदी

जायँ, जिससे समिति के सदस्यों को वे यथासम्भव कम मूल्य मे, किफायत से, दी जा सकें। समिति अपने सब सदस्यो के लिए वस्तुएँ खरीदती है, इसलिए वह स्वभावतः उन्हें बड़े परिमाण मे खरीदती है। इकट्ठी लेने से चीजो के भाव में कुछ रियायत हो जाती है; दूसरे स्थान से मँगानी हो तो बड़े परिमाण मे होने के कारण, पैकिंग खर्च तथा भाड़ा आदि भी औसतन कम पड़ता है। इस प्रकार उपभोक्ता-समिति को, अलग-अलग आदमियों की अपेक्षा, चीजें सस्ती पड़ती हैं, और वे अपने सदस्यो को उन्हें कम मूल्य मे, किफायत से, दे सकती हैं। उत्पादक और उपभोक्ता दोनो प्रकार की सहकारी समितियाँ दलालों को हटा देना चाहती हैं।

सहकारिता के सिद्धान्तों का उपयोग अनेक प्रकार से हो सकता है। इसलिए ऊपर बताई हुई दो प्रकार की सहकारी समितियों के अन्तर्गत कई तरह की समितियाँ होती हैं— कृषि-सहकारी-समितियाँ, गृह निर्माण-सहकारी-समितियाँ, दूध-सहकारी समितियाँ, विक्रय-सहकारी-समितियाँ आदि। शिक्षा स्वास्थ्य, सफाई, ग्राम-सुधार आदि चाहे जिस कार्य के

कि भारतवर्ष मे अधिकतर जनता किसानों की है, और, ये बहुत गरीब हैं; इनकी आर्थिक दशा बहुत खराब है। इन्हे खेती आदि के लिए रुपए की बहुत जरूरत होती है, परन्तु इनकी साख कम होने के कारण इन्हे महाजन बहुत अधिक सूद पर रुपया उधार देते हैं। इसका उपाय क्या है?

तुम जानते हो कि जो पूँजी एक मनुष्य को अपनी साख पर, कभी-कभी बहुत प्रयत्न करने पर भी, नहीं मिल सकती, वही कई मनुष्यों की साख पर कम ब्याज में और आसानी से मिल सकती है। इसलिए नागरिको को सहकारी साख समितियाँ स्थापित करने की बड़ी आवश्यकता है, जो उनकी साख बढ़ावें। इन समितियों का उद्देश्य यह होता है कि किसानो की कर्जदारी दूर हो, वे फ़िजूलखर्ची न करे, और उन्हें उपयोगी कार्यों के लिए रुपया उधार मिल सके, जिससे उनकी आमदनी बढ़े।

सरकारी कानून—भारतवर्ष में सहकारी साख समितियों का कानून बना हुआ है; इसकी कुछ मुख्य-मुख्य बातें इस प्रकार हैं:—(१) किसी गाँव या शहर के एक जाति या पेशे के, अठारह साल से अधिक उम्र के कम-से-कम दस आदमी मिलकर सहकारी साख समिति बना सकते हैं। (२) समिति के सदस्य (मेम्बर) वे ही आदमी होने चाहिएँ, जो एक-दूसरे को अच्छी तरह जानते हों। (३) समिति का कार्य अपने सदस्यों की अमानत जमा करना, दूसरे आदमियों से एवं अन्य समितियों से उधार लेना, तथा अपने सदस्यों को आवश्यकतानुसार उधार देना, है। (४) समिति का प्रत्येक सदस्य अपनी समिति का कुल कर्ज चुकाने का जिम्मेवार होता है। (५) समिति इन सिद्धांतों को बर्तते हुए, अपनी स्थानीय परिस्थिति के अनुसार उपनियम

बना सकती है । (६) इन समितियों की देखभाल करने तथा इनके काम को बढ़ाने के लिए, हर एक प्रान्त में इनका एक प्रधान अधिकारी रहता है, उसे रजिस्ट्रार कहते हैं ।

सरकार ने इन समितियों को कई सुविधाएँ दे रखी हैं। इन समितियों तथा इनके सदस्यों की ओर से, समिति के सम्बन्ध में जो दस्तावेज लिखे जायँ, उनका स्टाम्प खर्च, तथा जिनकी रजिस्ट्री कराई जायँ उनका रजिस्टरी-खर्च माफ है। सहकारी साख-समितियों के मुनाफे पर इनकमटेक्स भी माफ है। एक समिति अपने जिले की दूसरी समिति को रुपया, बिना खर्च भेज सकती है। समिति के किसी सभासद का कोई हिस्सा कभी कुर्क नहीं किया जा सकता। रजिस्ट्री हो जाने पर समिति को जिले के सेंट्रल बैङ्क से निर्धारित सूद पर रुपए उधार मिलने लगते हैं ।

अन्य बातें—समितियाँ रुपया उधार लेकर, उसे कुछ अधिक सूद पर अपने सदस्यों को दे देती हैं। तथापि इस सूद की दर उस दर से कम होती है, जिस पर किसानों को आम तौर से रुपया उधार मिल सकता है। इन समितियों से सर्वसाधारण को और भी लाभ होता है। लोगो को आपस में मिलकर काम करने की आदत पडती है। इससे उनमें प्रेम और एकता की वृद्धि होती है। इनके सभासदो को मितव्ययिता का अभ्यास हो जाता है, इससे उनकी आर्थिक दशा सुधरती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इन समितियो के बढ़ने की बड़ी आवश्यकता है।

इन समितियो के लिए जो बैङ्क खोले जाते हैं, उन्हें सहकारी बैङ्क कहते हैं। इनसे सर्वसाधारण और विशेषतया किसानों का बहुत सम्बन्ध होता है। इनका प्रचार नगरों और गाँवों में बढ़ता

जा रहा है। ये बैङ्क उधार ले तो सबसे लेते हैं, परन्तु सहकारी समितियों के सिवाय और किसी को उधार देते नही। इनके दो भेद है. प्रान्तीय और सेंट्रल। प्रान्तीय बैङ्क सेंट्रल बैङ्को की सहायता तथा उनकी देख-रेख करते हैं। सेंट्रल वैंक एक ज़िले की, या उसके किसी भाग की, सहकारी समितियों की सहायता करते हैं। सहकारी वैंको का प्रबन्ध प्रायः स्थानीय आदमी ही करते हैं।



सतरहवाँ पाठ

स्वास्थ्य-रक्षा



पाठको। तुम्हें अपने अनुभव से यह बात मालूम होगी कि जब कोई आदमी बीमार पड़ जाता है तो उसका सब सुख नष्ट हो जाता है, उससे कोई काम ठीक नहीं हो सकता। इसके अलावा, वह जिस आदमी से अपनी बीमारी मे सेवा-सुश्रुषा कराता है, उसके भी काम में हर्ज होता है। इसलिए हर एक आदमी को स्वस्थ या तन्दुरुस्त रहने का प्रयत्न करना चाहिए।

स्वास्थ्य-रक्षा के उपाय—तन्दुरुस्त रहने के लिए आदमी को शुद्ध और सादा भोजन करना चाहिए, साफ हवा के मकान मे रहना चाहिए, स्वच्छ जल पीना चाहिए, आवश्यक व्यायाम और विश्राम करना चाहिए, मन में पवित्र विचार रखने चाहिए.

और अच्छी संगति मे रहना चाहिए। इन बातो को समझने मे कुछ कठिनाई नही होती. परन्तु बहुत से आदमी अपनी गरीबी और अज्ञान आदि के कारण इन पर अमल नहीं कर सकते। उनके मकान तंग या गंदी गलियो मे होते हैं, वे सड़ी गली चीजें खा लेते हैं, और जिस कुएँ या तालाब पर आदमी नहाते है, उसका ही पानी पीलेते हैं। इससे उनके शरीर पीले और कमजोर पड़ जाते हैं, मलेरिया, प्लेग, हैजा आदि रोगों के घर बन जाते हैं। लोगो की गरीबी दूर करने के लिए देश मे उद्योग-धधे, कला-कौशल आदि आजविका के साधनो का प्रबन्ध होना चाहिए। इसी प्रकार अज्ञान हटाने के वास्ते शिक्षा-प्रचार की बहुत आवश्यकता है। इनका वर्णन पहले किया जा चुका है।

कुछ आदमी गरीब तो नही होते, पर अपनी शौकीनी के कारण ही बड़ा कष्ट पाते है। वे अपने खानपान, रहनसहन आदि मे अमीरी दिखाना चाहते हैं। उदाहरण के तौर पर वे अपने हाथ पांव हिलाकर काम करना नहीं चाहते. सब काम नौकरों से कराते हैं; कुछ व्यायाम या कसरत भी नही करते। मैदे या बेसन की तली हुई चीजें, या मिठाई अधिक खाते हैं। पान-बीडी. इतर-फुलेल, चाय या नशीली चीजो का सेवन करते है। फिर ये तन्दुरुस्त कैसे रहे ? लोगों को संयम या सादगी से रहना चाहिए।

हमारे देश में. बाल-विवाह तथा परदे आदि की बहुतसी कुरी-तियां भी जनता के स्वास्थ्य में बाधक होती हैं। इन बातों को

ओर लोगो का ध्यान आकर्षित हो रहा है, और इनमें थोड़ा-बहुत सुधार भी होता जा रहा है। परन्तु अभी बहुत काम होना शेष है। यहाँ लोगो की औसत आयु लगभग तेईस वर्ष है, जबकि अन्य देशो में यह चालीस वर्ष, तथा इससे भी अधिक है। इसी प्रकार यहाँ फी हज़ार आदमियो में से कोई तीस आदमी हर साल मर जाते हैं, जबकि संसार में कितने ही देश ऐसे हैं, जहाँ हज़ार पीछे केवल दस-ग्यारह आदमी ही मरते हैं। स्वास्थ्य-रक्षा के कार्यों की ओर ध्यान देने से इन बातो में बहुत सुधार हो सकता है।

स्वास्थ्य-रक्षा का प्रबन्ध—शहरो मे म्युनिसपेलटियों के उद्योग से स्वास्थ्य सम्बन्धी कई प्रकार के कार्य हो रहे हैं। बड़े क़स्बो में, या शहरो मे सफाई का डाक्टर (हेल्थ आफीसर) रहता है। गन्दे पानी के बहने के लिए नालियाँ या मोरियाँ बन रही हैं। कुछ शहरो मे खुले बाज़ार और चौड़ी सड़कें भी बन रही हैं। परन्तु आवश्यकता बहुत अधिक काम की है। शहरो में मामूली हैसियत के आदमियो को साधारण किराए पर अच्छा साफ हवादार मकान मिलना असम्भव हो रहा है। कुछ म्युनिसपेलटियाँ इस ओर ध्यान दे रही हैं।

देहातों मे खुली और ताज़ा हवा होने पर भी, स्वास्थ्य-रक्षा का प्रश्न बहुत कठिन है। प्राय: वहाँ गन्दे पानी के बहने के लिए पक्की नालियाँ या मोरियाँ होती ही नही, जिधर ढलाव मिल जाता है उधर ही पानी बहने लगता है। अनेक स्थानों में रास्ते बहुत ऊँचे-नीचे या तंग हैं। नए ढङ्ग की खुली चौड़ी सड़कें वहाँ

ढूँढ़ने से भी न मिलेंगी। रोगों का प्रचार बहुत अधिक है। काफ़ी धन न होने के कारण ज़िला-बोर्ड बहुत ही कम काम कर पाए हैं। अब स्वतन्त्र भारत की नई पंचायतों से बहुत आशा है।

म्युनिसिपैलिटियाँ और ज़िला-बोर्डों द्वारा स्वास्थ्य रक्षा के लिए लोगों को कहीं कहीं मैजिक (जादू का) लालटेन के व्याख्यानों से यह बतलाया जाता है कि भिन्न-भिन्न रोग किन कारणों से पैदा होते हैं, और इनके रोकने का क्या उपाय है। प्लेग और चेचक आदि का टीका लगवाया जाता है। अब कई जगहों में प्रतिवर्ष नियमित रूप से ग्राम-सुधार मनाया जाता है. इस

विभाग है, उसे 'सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग' कहते हैं। यह विभाग अपने-अपने प्रान्त के स्वास्थ्य सम्बन्धी कामों की निगरानी करता है। प्रान्त भर में इस विभाग का जो सबसे बड़ा अधिकारी होता है, उसे सार्वजनिक स्वास्थ्य का 'डायरेक्टर' कहते हैं। उसके नीचे हर एक ज़िले मे एक 'सिविल सर्जन' होता है। इसे तुम जानते ही होगे। यह ज़िले के अस्पतालों और शफाखानो को देखने के अलावा ज़िले के स्वास्थ्य सम्बन्धी कामों की निगरानी करता है, और उनके सम्बन्ध में ज़िला-मजिस्ट्रेट को आवश्यक बातो की रिपोर्ट करता रहता है।

चिकित्सा कार्य; देहातों में अस्पताल—स्वास्थ्य-रक्षा के प्रबन्ध के साथ रोगियो के इलाज की भी व्यवस्था होना ज़रूरी है। शहरो में सरकारी अस्पतालो के अतिरिक्त ईसाई मिशन, रामकृष्ण मिशन, आर्यसमाज, जैन समाज तथा सेवा समितियों आदि की संस्थाएँ हैं। कितने ही डाक्टर या वैद्य प्राइवेट तौर पर इलाज करते हैं। तो भी अनेक रोगियो के लिए यथेष्ट व्यवस्था नहीं होती।

देहातो में तो चिकित्सा-प्रबन्ध बहुत ही कम है। अनेक गांवों में दूर-दूर तक कोई अस्पताल या औषधालय नहीं है। कहीं-कहीं बीमारी के मौसम में डाक्टर कुछ दवाइयाँ लेकर देहातों में दौरा करते हैं। अब स्वतन्त्र भारत की प्रान्तीय सरकारें खासकर देहातो की ओर बहुत ध्यान दे रही हैं। वे वर्तमान अस्पतालों की हालत सुधारने तथा नए अस्पताल खोलने का काम कर रही हैं। यूनानी और आयुर्वेदिक औषधालय

खोले जा रहे हैं। संक्रामक रोगों को फैलने से रोकने के उपाय काम में लाए जा रहे हैं। नागरिकों को चाहिए कि जनता की स्वास्थ्य-रक्षा के कामों में भरसक हाथ बटावें।



अठारहवाँ पाठ

दुर्व्यसनों का नियंत्रण



पाठको ! तुम अवश्य ही अच्छे नागरिक बनना चाहते होगे। इसके लिए तुम्हें शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, तथा स्वस्थ रहना चाहिए. शिक्षा और स्वास्थ्य के विषय में तुम इस पुस्तक में पहले पढ़ चुके हो। परन्तु, इसके अलावा इस बात की भी बड़ी आवश्यकता है कि तुम्हारा चालचलन अच्छा हो, तुम्हें कोई बुरी आदत न पड़े। इसके वास्ते, तुम्हें अच्छी संगति में

बुरा, तो बेहतर है कि हम इन्हे बिल्कुल ही न देखें। सरकार ने नियम बना रखा है कि जो कम्पनी बुरे दृश्य दिखाए, उस पर मामला चल सकता है, और उसे दंड मिल सकता है। परन्तु साधारण बुराइयाँ कानून की पकड़ में नहीं आती। नागरिको को सिनेमा या नाटक का चुनाव खूब सोच-विचार कर करना चाहिए; और जो बहुत अच्छे हो, उन्हें ही देखना चाहिए।

बुरी पुस्तकें—पाठको! पुस्तकों से कैसी अच्छी-अच्छी बातें मालूम होती है, यह तुम जानते हो। पर यह मत समझना कि सब पुस्तके अच्छी ही होती हैं, चाहे जो पुस्तक उठाई और पढ़ने लग गए। बड़े दुख की बात है कि कोई-कोई लेखक उपन्यास, नाटक, किस्से कहानी आदि की पुस्तकों में बहुत गन्दे विचार भर देता है। इससे पाठको को बड़ी हानि होती है। यद्यपि सरकारी कानून से, बुरी पुस्तकें प्रकाशित करना अपराध है, परन्तु फिर भी समय-समय पर बहुत सी खराब पुस्तकें छपती ही रहती हैं। तुम्हे जो पुस्तके पढ़नी हो, उनके विषय मे तुम्हें अपने अध्यापको से परामर्श कर लेना चाहिए। बड़े होने पर पुस्तक के अच्छी या बुरी होने की जाँच तुम स्वयं कर सकोगे।

जुआ—लालच बुरी बला है। आदमी झट इसके फन्दे मे फँस जाते हैं। वे सोचते हैं कि किसी प्रकार बिना मेहनत किए आसानी से झटपट कुछ धन मिल जाय, इसलिए वे जुआ खेलने लगते हैं। यहाँ दिवाली आदि के अवसर पर कुछ लोग जुआ खेलना मानों धर्म समझते है। जुए मे आदमी बहुत धन-

दौलत हार जाते हैं; कभी-कभी तो घर का सामान तक बिकने की नौबत आ जाती है। तुम कभी ऐसा मत सोचना कि अगर जुआ दो-चार पैसे से खेला जाय तो कुछ हानि नहीं। जुआ खेलने का विचार ही बुरा है। यह लत एक बार लगी, तो फिर बढ़ती ही जाती है। जीतने पर को अधिक धन पाने की तृष्णा बढ़ जाती है, हारने पर को अपने खोए हुए धन को पाने की इच्छा सताती है। इसलिए उचित है कि इसमें हाथ ही न डाला जाय। सरकार ने जुआ रोकने के लिए कानून बना रखा है; जो कोई जुआ खेलता पाया जाता है, उसे सजा दी जाती है।

नशीली चीजों का सेवन---शराब, अफीम आदि चीजें किसी-किसी बीमारी में, दवाई के तौर पर भी काम आती हैं; परन्तु इनका ज्यादह खर्च लोग शौकिया करते हैं। उन्हें आदत पड़ जाती है। फिर उन्हें अधिक नशे की जरूरत मालूम होती है; बहुत नशा करने पर उनकी हालत बिगड़ने लगती है। तुमने देखा होगा कि शराबियों का कैसा बुरा हाल होता है। कोई नालियों मे पड़ता है। कोई गाली-गलौच करता है, कोई किसी को मारता-पीटता है। अफीम, गाँजा, भंग, चरस आदि मादक पदार्थों को सेवन करनेवालों की भी ऐसी ही दशा होती है। उन्हें यह होश नहीं रहता कि वे क्या करते हैं और कहाँ जाते हैं। वे अपना धन तो इन चीजों में नष्ट करते ही हैं, इनसे उनका शरीर भी पीला, कमजोर और अनेक बीमारियों का घर बन जाता है इसलिए चाहे तुम्हारे मित्र कहें या रिश्तेदार, भूलकर

भी इन चीजो के सेवन का नाम न लेना। यह भी याद रखो कि तमाखु भी बड़ा विषैला पदार्थ है। इससे शरीर को बहुत हानि पहुँचती है। दुख की बात है कि नवयुवको मे सिगरेट और बीड़ी पीने का शौक बढ़ता जा रहा है। तुम्हें इससे हर प्रकार बचना चाहिए। चाय की कम्पनियों के एजट चाय के प्रचार के लिए तरह-तरह के विज्ञापन देते रहते हैं. इससे चाय का प्रचार विद्यार्थियो और किसानो तथा मजदूरो—सभी मे बढ़ता जा रहा है। चाय स्वास्थ्य को बिगाड़नेवाला पदार्थ है। पाठको को इसका सेवन कभी न करना चाहिए, और जिनको आदत पड़ गई हो उन्हें इसे छोड़ने का प्रयत्न करना चाहिए।

आबकारी विभाग—शराब, अफीम, गाँजा, भंग, चरस, आदि मादक पदार्थों के सेवन की रोकथाम करने के लिए प्रत्येक प्रान्त में एक सरकारी विभाग रहता है उसे आबकारी या 'एक्साइज़' विभाग कहते है। प्रान्त भर में इस विभाग का सबसे ऊँचा अधिकारी एक्साइज़ कमिश्नर कहलाता है। इसके नीचे हर एक जिले मे एक एक्साइज़ अफसर रहता है। इसके नीचे इस विभाग के इन्सपेक्टर, आदि कर्मचारी होते हैं। इस विभाग के कर्मचारी जगह-जगह घूमते रहते है. और इस बात की जॉच करते हैं कि कोइ आदमी इन पदार्थों को बिना सरकारी इजाज़त तो बनाता या बेचता नही; तथा, एक आदमी नियम के अनुसार जितना पदार्थ मोल ले सकता है उससे अधिक तो नहीं लेता। छोटे लड़को के हाथ ये चीजे नही बेची जातीं। जो कोई इन नियमो को भंग करता है, उसे, आबकारी विभाग के

कमेच भी सजा दिलाते हैं।

विशेष वक्तव्य—इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि जगह-जगह ऐसे उपदेशों तथा मैजिक लालटेन के व्याख्यानों आदि का प्रबन्ध किया जाय, जिनसे लोग नशे की हानियों को समझें, और इसे छोड़ने लगें। देश में कहीं-कहीं ऐसी संस्थाएँ काम कर रही हैं, जिनका उद्देश्य मादक वस्तुओं के लिए सर्व-साधारण में, मन में, घृणा पैदा करना है। इन्हें टेम्परेंस सभाएँ कहते हैं। इनसे आबकारी विभाग को सहानुभूति रखनी

अपनी और दूसरों की उन्नति करना—सरकार की ओर से नागरिकों की शिक्षा तथा स्वास्थ्य-रक्षा आदि के जो काम किए जाते हैं, उनसे लाभ उठाना या न उठाना नागरिकों के ही हाथ में है। उन्हे चाहिए कि अपनी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक तथा नैतिक उन्नति के लिए खूब प्रयत्न करें। साथ ही इस बात का ध्यान रखें कि उनके विविध कार्यों से किसी का अहित न हो; जब कभी अनुकूल अवसर हो. उन्हे दूसरो की सेवा करनी, तथा उनकी उन्नति में सहायता देनी चाहिए। अपनी तथा दूसरो की उन्नति के लिए कई बातें आवश्यक हैं। पहले, अवकाश या फुरसत के समय के सदुपयोग का विचार करते हैं।

अवकाश का सदुपयोग—पाठको! तुम्हे कभी लिखने-पढ़ने के काम से छुट्टी मिलती होगी। उस समय तुम क्या करते हो? क्या व्यायाम या विश्राम करते हो? बहुत अच्छा; एक सीमा तक ऐसा करना अत्यन्त आवश्यक है; परन्तु कभी-कभी अवकाश अधिक भी तो मिलता होगा। यदि तुम उस समय का ठीक-ठीक उपयोग करो तो अपनी तथा दूसरो की बहुत उन्नति कर सकते हो। यदि तुम्हारे ग्राम या नगर मे कोई वाचनालय या पुस्तकालय हो तो तुम्हे वहाँ जाकर विविध पत्र-पत्रिकाएँ देखनी चाहिएँ, या महापुरुषों के जीवनचरित्र अथवा अन्य पुस्तकें पढ़नी चाहिएँ। इससे तुम्हारा मनोरंजन तो होगा ही, इसके साथ-साथ अनेक विषयो में तुम्हारा ज्ञान भी बढ़ेगा। अगर तुम्हारी रुचि हो तो अवकाश के समय तुम विविध

उपयोगी विषयों पर निबन्ध लिखने का अभ्यास कर सकते हो। इससे तुम्हें अपने विचार अच्छी तरह प्रकट करने की योग्यता प्राप्त हो जायगी; सम्भव है, तुम कभी अच्छे लेखक बन सको। अवकाश के समय अपने पड़ोस के बालको को लिखने-पढ़ने मे लगाकर, तुम उनमे शिक्षा-प्रचार करने में सहायक हो सकते हो।

जब कभी तुम्हे अपने गाँव या नगर से बाहर, दूसरी जगह जाने का सुभीता हो, तो तुम्हे वहाँ की कारीगरी या प्राकृतिक तथा ऐतिहासिक दृश्य देखने चाहिएँ। तुम्हे चित्रकारी, बागवानी (बाग में फूलो आदि के पौधे लगाना), तैरने या बालचर (स्काउट) आदि के काम मे अपना अनुराग बढ़ाना चाहिए, जिससे बड़े होने पर तुम्हें अपने अवकाश का समय काटना दूभर प्रतीत न हो; तुम उससे अपना एवं दूसरो का हित-साधन कर सको।

स्वावलम्बन—प्रत्येक नागरिक को अपना निर्वाह खुद करना चाहिए। यह बहुत अनुचित है कि हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे और अपने बाप-दादा की कमाई हुई सम्पत्ति में से खाएँ-खर्चें, या, अन्य भाई-बन्धुओ के आसरे पड़े रहे, अथवा दान या भिक्षा से अपना पेट भरें। इससे हमारी उन्नति मे बाधा पड़ती है, हमारे साहस, पुरुषार्थ, और आत्म-सम्मान आदि सद्गुणो का विकास रुक जाता है। साथ ही, हम दूसरों का कमाया धन खर्च करके समाज को उस लाभ से वंचित करते हैं, जो उस धन को किसी अन्य उपयोगी कार्य में खर्च करने से

होता। जिन लोगों को परमात्मा ने हाथ पाँव दिए हैं, वे दूसरों पर भार क्यों बनें! दान-दक्षिणा या सहायता लेना केवल उनके लिए ठीक है, जो अपाहज अर्थात् लँगड़े लूले आदि होने की वजह से, भरसक उद्योग करने पर भी, अपना निर्वाह नहीं कर पाते, अथवा, जो अपना सब समय समाज या राज्य की उन्नति के विविध उपाय सोचने या लोक-सेवा करने में लगाते हैं। इससे स्पष्ट है कि आमतौर से प्रत्येक नागरिक को स्वावलम्बी होना चाहिए।

मितव्ययिता—बहुत से आदमी आगे की चिन्ता नहीं करते; वे भविष्य के लिए कुछ धन बचाकर रखने की आवश्यकता नहीं समझते। वे कहा करते हैं कि जब मिलता है, तो क्यों न खाएँ, पीएँ और मौज उड़ाएँ। वे भूल जाते हैं कि आज हम स्वस्थ हैं, और धन पैदा कर रहे हैं, कौन-जाने कल हम बीमार पड़ जायँ, या कोई दुर्घटना हो जाय, जिससे रोज़ी कमाना मुश्किल हो जाय, और दूसरों के सामने हाथ पसारना पड़े। निदान, हमें चाहिए कि जहाँ तक बने, हर माह अपनी आमदनी में से कुछ-न-कुछ बचाकर रखने की आदत डालें, जिससे आवश्यकता होने पर, जमा किया हुआ धन हमारे काम आवे। यदि हमारे पास कुछ पैसा जमा होगा तो हम उससे दीन अनाथों आदि की सहायता कर सकते हैं, तथा अपने आश्रितों को दूसरों का मोहताज होने से बचा सकते हैं। रुपया जमा करने के लिए देश में जगह-जगह बैंक खोले जाते हैं, तथा जिन्दगी के बीमे की व्यवस्था की जाती है। इसके बारे में तुम

पहले पढ़ चुके हो।

सहानुभूति और समभाव—हिन्दू हों या मुसलमान, ईसाई हों या पारसी, इस देश के सभी निवासी यहाँ के नागरिक हैं। सबको आपस में एक दूसरे से सहानुभूति और समभाव का बर्ताव करना चाहिए। देश तथा राज्य हमारा सबका है, और हम सब को मिलकर उसके कल्याण के लिए कोशिश करनी चाहिए। जिस देश के आदमी, धार्मिक या सामाजिक भेद-भाव रखने के कारण एक दूसरे से लड़ते-झगड़ते हैं, वे अपनी उन्नति में स्वयं बाधक होते हैं। किसी देश में जाति बिरादरी, मत, सम्प्रदाय आदि की भिन्नता होते हुए भी, यदि उसमें राज्य-सम्बन्धी अर्थात् नागरिक विषयों में एकता हो, तो उसकी उन्नति होती रहेगी। भारतीय नागरिकों को इस विषय पर समुचित ध्यान देना चाहिए।

को समझते हुए, सोच-विचार कर करना चाहिए।

इसके अलावा दो बातों का और विचार किया जाना चाहिए—सरकारी कानूनों का पालना, और सरकारी टेक्स देना। यदि नागरिक ये कार्य न करें तो शासन-कार्य चल ही नहीं सकता। सरकार जो कानून बनाती है, या जो टेक्स (कर) लगाती है, वे देश की सुख शान्ति और उन्नति के लिए ही होते हैं। जो आदमी कानून का पालन नही करते या टेक्स नहीं देते, उन्हे दंड मिलता है। परन्तु दंड मिले या न मिले, नागरिको को ये कार्य अपना कर्त्तव्य समझ कर, करने चाहिएँ। यदि कोई कानून या टेक्स बुरा प्रतीत हो तो बड़ी उम्रवाले योग्य तथा अनुभवी नागरिको को उसका विचार करके आवश्यकतानुसार उसे बदलवाने या रद्द कराने का प्रयत्न करना चाहिए।

शासनपद्धति का ज्ञान प्राप्त करना—तुम यह जान चुके हो कि नागरिको को, सरकार द्वारा किए जानेवाले विविध कार्यों से लाभ उठाना चाहिए, उन्हे सरकार की सहायता करनी चाहिए, तथा उसके अच्छे उपयोगी कायदे कानूनो का पालन करना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हे अपने देश के राजप्रबन्ध का ज्ञान हो। भारतवर्ष की शासनपद्धति का विशेष हाल हमारी 'सरल भारतीय शासन', तथा 'भारतीय शासन' पुस्तको मे दिया गया है।

———

बीसवाँ पाठ

नागरिकता की व्यावहारिक शिक्षा

—— ÷ ——

पिछले पाठ मे तुम यह पढ़ चुके हो कि हमें यथा-सम्भव दूसरो की सेवा करनी चाहिए। परन्तु यदि हमें सेवा करने का ज्ञान और अभ्यास नही है तो अवसर आने पर, हमसे इस विषय में बहुत गलतियाँ हो सकती है। कल्पना करो कि एक आदमी नदी मे डूब रहा है। हम जानते हैं कि उसे बचाना हमारा कर्त्तव्य है। परन्तु यदि हमें स्वयं तैरना न आता हो, और हमने दूसरे को डूबने से बचाने का कभी अभ्यास न किया हो, तो चाहे हमारी इच्छा कितनी ही प्रबल क्यो न हो, हम उस आदमी को बचाने का कार्य अच्छी तरह नही कर सकते।

व्यावहारिक शिक्षा देनेवाली संस्थाएँ—इससे यह स्पष्ट है कि देश में नागरिकता की व्यावहारिक शिक्षा देनेवाली संस्थाओ का होना बहुत आवश्यक है। यहाँ ऐसी मुख्य-मुख्य संस्थाएँ तीन प्रकार की हैं—(१) बालचर या स्काउट संस्थाएँ, (२) सेवा समितियो और (३) सहकारी समितियाँ। इनमें से सहकारी समितियो के विषय मे पहले लिखा जा चुका है।

बालचर संस्थाएँ—बालचर संस्थाओ का उद्देश्य लोगों

को सदाचारी, स्वावलम्बी, साहसी, और सेवा-व्रती बनाना है। भारतवर्ष मे ये दो प्रकार की हैं :—वेडनपावल * बालचर संस्थाएँ, (२) सेवा-समिति बालचर संस्थाएँ। दोनो के उद्देश्य और नियम प्रायः एकसे ही हैं। सेवा-समिति स्काउटो की संस्था का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। बहुत से स्कूलों के अतिरिक्त अनेक शहरों के मोहल्लो और गाँवो में भी इसकी शाखाएँ हैं। इसके द्वारा विद्यार्थियो के अलावा अन्य युवक भी शिक्षा पाते हैं। तरह-तरह के खेल कसरत से उनमें जिन्दादिली, साहस और स्फूर्ति बढाई जाती है। कभी आग लगने का नकली दृश्य उपस्थित करके बालचरो को उसे बुझाने तथा वहाँ के आदमियो, बच्चो और सामान की रक्षा करने की क्रियात्मक या अमली शिक्षा दी जाती है। कभी उन्हे इस बात का अभ्यास कराया जाता है कि जल में डूबते हुए आदमी को किस प्रकार बचाया जाय, अथवा जख्मी आदमी की मरहम-पट्टी तथा अन्य सेवा-सुश्रूषा किस तरह की जाय। निदान, बालचरो को तरह-तरह से सेवा करने का अनुभव कराया जाता है।

बालचर सम्बन्धी नियम—बालचर सम्बन्धी नियम निम्नलिखित हैः—(क) बालचर की बात-व्यवहार का विश्वास किया जाता है। (ख) वह महेश (परमात्मा), देश, नरेश, माता पिता, गुरू, स्वामी, साथियों तथा अपने अधीन व्यक्तियों के प्रति वफादार होता है। (ग) वह दूसरों की सहायता करता है। (घ) वह सब का मित्र, तथा अन्य

* वेडनपावल उस सज्जन का नाम है, जिसने इङ्गलैण्ड में सबसे पहले बालचर आन्दोलन का श्रीगणेश किया।

बालचरों का बन्धु होता है, चाहे वे किसी भी वर्ण, धर्म या जाति के हों। (च) वह सुशील और नम्र होता है। (छ) वह पशु पक्षियों पर दया करता है। (ज) वह आज्ञाओं का पालन करता है। (झ) वह सब कठिनाइयों में हँसमुख रहता है। (ट) वह मितव्ययी होता है। (ठ) वह मन वचन तथा कर्म से पवित्र होता है।

सेवा समितियाँ—अखिल भारतवर्षीय सेवा समिति की स्थापना महामना पंडित मदनमोहन मालवीय जी आदि ने सन् १९१४ में की थी। इसका प्रधान कार्यालय प्रयाग में है। इसकी शाखाएँ खासकर पंजाब और उत्तरी भारत के विविध भागों में हैं। समिति राजनैतिक या धार्मिक मतभेदों से कोई सम्बन्ध नहीं रखती और इसमें हर एक जाति के पुरुष एवं स्त्रियाँ भाग ले सकती हैं। अठारह वर्ष या इससे अधिक आयु के सब व्यक्ति, इस के सदस्य हो सकते हैं। समिति के उद्देश्य और लक्ष्य निम्नलिखित हैं—

क. समाज-सेवा के आदर्शों का जनता में प्रचार करना।

ख. समय-समय पर सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का अध्ययन और उनके विषय में लोकमत संग्रह करना।

ग. जन-पीड़ा को दूर करना और सामाजिक दुःख-निवारण के लिए साधनों को संगठित करना।

घ. समाज-सेवकों की शिक्षा का प्रबन्ध करना और एक स्वयंसेवक दल (वालन्टियर कोर) की स्थापना करना।

ङ शिक्षा, सहयोग, स्वच्छता और स्वास्थ्य-विज्ञान की उन्नति और प्रचार का प्रयत्न करना।

च हरिजनों के उत्थान तथा क़ैदियों और जरायमपेशा जातियों की शिक्षा एवं सुधार के लिए उचित साधनों का संग्रह करना।

छ. विधवा-आश्रम, अबला-आश्रम, परित्यक्त-बाल-गृह, कोढ़ी, अंधों और अपाहिजों सम्बन्धी आश्रमों का संगठन करना।

ज. बीमारों की सेवा-शुश्रूषा का विशेषतः देहातों में प्रबन्ध करना, और जच्चा-बच्चा उपकार गृह स्थापित करना।

झ. मेलों, दुर्भिक्ष, बाढ़ अथवा महामारी के अवसरों पर सहायता की योजना करना।

ञ. बालचर-संस्था की स्थापना और संगठन करना; तथा

ट, समान उद्देश्य वाली समितियों की संस्थापना करना और संस्थापित समितियों को सम्बद्ध-शाखा बनाना।

समिति महामारी, दुर्भिक्ष, बाढ़, भूकम्प, रेलवे दुर्घटनाओं, और दंगों के अवसर पर जनता को बड़ी सहायता पहुँचाती रही है। यह कुम्भ मेले, सूर्यग्रहण और अजमेर के उर्स मेले पर खूब काम करती है। समिति ने सन् १६१६ में पंजाब के फौजी कानून (मार्शल ला) से पीड़ितों को, सन् १६४२-४३ में बर्मा के शरणार्थियों को, और सन् १६४७-४८ में पाकिस्तान से आए हुए शरणार्थियों की मदद करने के लिए सगठित कार्य किया।

सेवा समितियों के कुछ सदस्य बालचर संस्थाओं की शिक्षा पाए हुए होते हैं। इनके कार्य स्थानीय आवश्यकताओं तथा सुविधाओं के अनुसार भिन्न-भिन्न होते हैं, यथा स्टेशनों पर पानी पिलाना, मेले-तमाशों में भूले-भटके स्त्री-बच्चों को रास्ता बताना, अथवा उन्हें उनके सम्बन्धियों के पास पहुँचाना, रोगियों को

दवा देना, लावारिस मुर्दों को जलाना, आग बुझाना, इत्यादि। समितियाँ जनता मे शिक्षा-प्रचार के लिए कही-कहीं अपनी शक्ति के अनुसार, वाचनालय, या रात्रि-पाठशालाएँ भी खोलती हैं जिनमे इनके कुछ सदस्य अवैतनिक सेवा किया करते है। कहीं-कही इन संस्थाओ को म्युनिसपेलटियो या ज़िला-बोर्डों आदि से कुछ सहायता मिलती है, अथवा बाजार वाले तथा अन्य व्यक्ति चन्दा आदि करके इनकी सहायता करते है। अधिकांश सेवा समितियों के सगठन और आर्थिक स्थिति मे सुधार की आवश्यकता है।

अन्य संस्थाएँ—इनके अतिरिक्त, देश के भिन्न-भिन्न भागो मे कुछ संस्थाएँ खास उद्देश्य से काम कर रही हैं, यथा सोशल सर्विस लीग' (समाज-सेवा संघ), बम्बई; जीव-दया सघ, बम्बई; भारत सेवक समिति (सर्वेंट्स-आफ-इडया सोसायटी), पूना; मारवाड़ी रिलीफ सोसायटी (सहायता समिति), कलकत्ता, डेकन एज्यूकेशन सोसाइटी' (दक्षिण शिक्षा समिति), पूना; हिन्दुस्तानी सेवा दल, हुवली (करनाटक); कौमी सेवा दल; अखिल भारत वर्षीय ग्रामोद्योग' संघ और चर्खा संघ आदि। राष्ट्रव्यापी महान राष्ट्रीय संस्था कांग्रेस को तुम जानते ही होगे। इन विविध संस्थाओ के विषय में विशेष बातें तुम्हें पीछे मालूम हो जायँगी।

राजप्रबन्ध सम्बन्धी शिक्षा—राजप्रबन्ध सम्बन्धी कितनी ही बातें ऐसी हैं, जिनकी शिक्षा विद्यार्थी जीवन में दी जा सकती है। कुछ समय से इस ओर ध्यान दिया जाने लगा है। कहीं-कहीं कुछ संस्थाओं में प्रति सप्ताह सभा होती है।

इसमें मुख्य अध्यापक उपस्थित तो रहता है, परन्तु केवल दर्शक के रूप मे। कार्य-संचालन करते हैं, विद्यार्थी ही। सभा मे किसी नागरिक विषय पर वाद-विवाद होता है। कभी-कभी राज-प्रबन्ध सम्बन्धी साधारण घटनाओ की नकल या नाटक किया जाता है। उदाहरण के लिए यह दिखाया जाता है कि एक आदमी कुछ अपराध करता है, इस पर पुलिस क्या क्या कार्रवाई करती है, और अदालत मे उसके विषय में किस तरह विचार होता है। अथवा, किसी पद के लिए एक आदमी की जरूरत है, उसका किस प्रकार विज्ञापन दिया जाता है, फिर उम्मेदवारो की दरख्वास्तो पर किस तरह विचार किया जाता है। कभी-कभी यह दिखाया जाता है कि एक निर्वाचक-सघ से किसी आदमी का चुनाव करने का क्या ढङ्ग होता है। इन बातो से युवको को अपने विद्यार्थी जीवन में ही उन नागरिक विषयो का व्यावहारिक ज्ञान हो जाता है, जो स्कूल छोड़ने के बाद उनके सामने उपस्थित होगे।

युवकों को चाहिए कि जब उन्हें नागरिकता की व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा हो, उससे यथेष्ट लाभ उठावें, और योग्य नागरिक बनने का प्रयत्न करते रहें।

—०—

परिशिष्ट—१

मेरा प्यारा गांव

सफाई और शिक्षा की बात



भारतवर्ष गांवों का देश है। यहां की नब्बे प्रतिशत जनता गांवों में रहती है। सौभाग्य से इस समय जगह जगह गांवों के सुधार की चर्चा है। यदि यह कार्य नेकनीयती और लगन से किया जाय तो देश की असली उन्नति होगी। प्रत्येक भारतवासी का कर्तव्य है कि

भी नही पढ़ सकता, सरकारी सूचनाएँ दूसरों से पढ़वाकर सुनता हूँ, घर का हिसाब-किताब कराने के लिए मुझे दूसरो की शरण लेनी पड़ती है, और जब कही हस्ताक्षर या दस्तखत की ज़रूरत होती है तो मुझे अँगूठे की निशानी लगानी पड़ती है। मुझ अभागे को अपना नाम भी लिखना नही आता !

पर अफसोस करने से ही काम न चलेगा। मुझे अपना नाम ही नही, पत्र लिखना भी आना चाहिए। मैं आज से निश्चय किए लेता हूँ कि जैसे-भी हो मैं पढ़ना-लिखना सीखूँगा। अगर परमात्मा मेरी जिन्दगी एक वर्ष भी और बनाए रखे तो मैं अपढ़ अवस्था में नहीं मरूँगा। और, अब तो जगह-जगह साक्षरता या शिक्षा का प्रचार हो रहा है। सरकार अध्यापकों तथा पाठशालाओं की व्यवस्था कर रही है। मैं प्रौढ़-शाला में भरती होऊँगा। हाँ, यह ठीक है कि मेरा लड़का भी अनपढ़ है, और उसे भी पढ़ाना है। दोनों एक ही कक्षा में पढ़ना शुरू करेंगे। शायद कुछ आदमी बाप बेटे को एक ही कक्षा में पढ़ते देखकर हँसी करें। पर ऐसी हँसी से मैं एक अच्छे काम को क्यों छोड़ूं ! जो लोग आज हँसी करेंगे, वे जब मेरे दृढ़ निश्चय को देखेंगे तो कुछ समय बाद हँसना छोड़ देंगे। नही, वे ही मेरे साहस की प्रशंसा करेंगे। धीरे-धीरे दूसरे आदमी भी मेरे उदाहरण से शिक्षा लेंगे। अब तक हमारा प्यारा गाँव निरक्षरों का गाँव कहा जाता है, यह हम लोगों के लिए बड़े अपमान की बात है। जैसे-भी हो हमें इस अपमान को हटाना होगा। मैं अपने अन्य बन्धुजनो से इस विषय का खूब चर्चा करूँगा,

और उनका भी- पढ़ना सीखने के लिए, उत्साह बढ़ाऊँगा।

हमें अपने गाँव का अभिमान है। हम इसे निरक्षर गाँव नहीं रहने देंगे। हमारा गाँव दूसरों की निगाह में असभ्य और अशिक्षित माना जाय, इससे बढ़ कर हमारे लिए कलंक की बात और क्या होगी? हमारे जन्म के समय यह गाँव जैसा अज्ञानमय था, यदि हमारे मरते समय भी वैसा ही मूर्ख बना रहा तो हमारे इस जीवन का लाभ ही क्या हुआ! इस गाँव का सुधार कोई बाहर से आकर करेगा, यह धारणा ही ग़लत है। हम किसी के भरोसे क्यों बैठे रहें! गाँव हमारा है, इसकी अवनति का दोष हम पर है। इसका सुधार करना हमारा काम है और हम इसे करके रहेंगे। तभी तो हमारा, इस गाँव को अपना गाँव कहना सार्थक होगा। सच्चा प्रेम वही है जो सुधार और विकास में सहायक हो। जैसे मुझे अपना शरीर प्यारा है, वैसे ही अपना गाँव भी प्यारा है, उसका सुधार और उन्नति में जी-जान से करूँगा।

नोट—गाँव के सब निवासियों को इसी प्रकार के विचार रखने चाहिएँ। नगर-निवासियों को अपने-अपने नगर के प्रति इसी तरह की भावना रखते हुए नगरोन्नति के लिए अपना कर्तव्य पालन करते रहना चाहिए।



परिशिष्ट—२

नागरिकता की कसौटी

प्यारे विद्यार्थियो ! तुम आज दिन स्कूल में बेंचों पर बैठकर शिक्षा प्राप्त कर रहे हो। जल्दी ही वह समय आनेवाला है, जब तुम्हें देश-सुधार सम्बन्धी विविध समस्याओं पर विचार करना होगा, और अनेक रचनात्मक कार्यों में भाग लेना होगा। राष्ट्र के भावी सूत्रधार तुम्हीं हो। अपने ऊपर आनेवाले इस महान उत्तरदायित्व का विचार करते हुए तुम्हें सुयोग्य नागरिक बनने का प्रयत्न करना चाहिए।

हम जन्म से तो मनुष्य हैं, परन्तु असल में मनुष्य कहलाने के लिए हमें मनुष्य के कार्य करने चाहिएँ और अच्छे गुणों को प्राप्त करना चाहिए। उसी प्रकार यद्यपि हम जन्म से भारतीय नागरिक हैं, हमें अपने कार्यों और व्यवहार से भी यह दिखाना चाहिए कि हम नागरिक कहे जाने के योग्य और अधिकारी हैं।

विद्यार्थियो को याद रखना चाहिए कि कुछ नागरिक कार्य तो ऐसे हैं कि उनके करने की योग्यता धीरे-धीरे और कुछ काल पीछे प्राप्त होगी। परन्तु कितनी-ही बातें तो हम अभी, अपने विद्यार्थी-जीवन मे भी कर सकते हैं। हम कोई काम ऐसा

न करें; जिससे हमारे साथियों या अध्यापकों आदि को असुविधा या हानि हो। हम दूसरो से सहानुभूति और सहयोग का भाव रखें, अपने स्वार्थ, बेपरवाही या आरामतलबी से किसी के लिए कष्टदायक न बनें। हम अपनी बात के पक्के हों, और व्यवहार के खरे हो। हम अपने क्लास और स्कूल के अंग हैं, हमें इनका उचित अभिमान करना चाहिए और उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए। जहाँ तक हमारा सम्बन्ध है, हमें ऐसा लोकमत बनाने में सहायक होना चाहिए कि इस क्लास के लड़के बहुत अच्छे हैं, या यह स्कूल बहुत बढ़िया है। हमने इन्हें जिस रूप मे पाया उससे हम इन्हें अच्छी दशा मे छोड़ने के लिए कमर कसें।

भारतवर्ष अपने भावी उत्थान के लिए युवकों तथा विद्यार्थियों की ओर निहार रहा है। यदि वे इस समय अपना कर्तव्य अच्छी तरह पालन करेगे तो यह देश सब विघ्न-बाधाओ को दूर करके आनेवाले ससार में यथेष्ट स्थान प्राप्त करेगा। इसलिए हमे रोज़मर्रा के व्यवहार में नागरिकता के भावों का परिचय देना चाहिए।

क रूप में सूचित भाव के अनुसार काम करें, वे १०० अंक के अधिकारी माने जाते हैं। यह नागरिक योग्यता की अधिकतम सीमा है।

प्रश्नावली

१—(क) दूसरों को वचन देने में और उसका पालन करने में आप हमेशा सावधान या चौकस रहते हैं? या

(ख) यूँ ही दिया हुआ वचन भूल जाते हैं? या

(ग) वचन देना और उसे पूरा न करना आपकी आदत ही हो गई है?

२—(क) आपके मातहत काम करनेवाले नौकर, कर्मचारी आदि के साथ आपका बर्ताव सहानुभूति तथा मलमनसाहत का होता है? या

(ख) आपकी यह राय है कि इनका काम है तो करते रहते हैं? या

(ग) इन लोगों की मुसीबतों वगैरह के बारे में आप उदासीन रहते हैं?

३—(क) आपके पास आनेवाले बिलों को आप तुरन्त चुका देते हैं? या

(ख) कभी-कभी आपके बिल महीनों तक पड़े ही रह जाते हैं? या

(ग) आपका तरीका यह बन गया है कि बिल आएँ और पड़े रहें?

४—(क) छोटे बच्चे आपके पास खुश रहते हैं या

(ख) बच्चों की इच्छा न हो तो भी आप उन्हें काफी देर तक बहला सकते हैं? या

(ग) बच्चों के बीच आपका जी घबराता है?

५—(क) क्या आपका यह मत है कि हरेक आदमी को सार्वजनिक सफाई की ओर ध्यान देना चाहिए? या

(ख) आप भी राह चलते कागजों के टुकड़े सड़कों पर फेंक दिया करते हैं ? या

(ग) आपकी यह राय है कि सार्वजनिक सफाई फजूल सी चीज है ?

६—(क) अपने निजी रहनसहन और धर्म-भावनाओं के बारे में पड़ोसियों का दिल न दुखाने की आप सदा कोशिश करते हैं ? या

(ख) आपके विचार में पड़ोसियों की भावनाओं को जानने की झंझट में पड़ना व्यर्थ है ? या

(ग) आपकी इच्छा रहती है कि दूसरे की राय के बारे में लापरवाही दिखाएँ ?

७—(क) कल्पना करो कि आपको दस रुपये का एक नोट मिल जाय। क्या आप यह पता लगाने की खूब कोशिश करेंगे कि नोट किसका है ? या

(ख) अगर वह आदमी पता लगाने आए और कहे कि नोट मेरा है तो आप उसे लौटा देंगे ? या

(ग) 'चलकर आई हुई लक्ष्मी' को लौटाना आपको पसन्द नहीं है ?

किया जाय तो आप डाली या भेंट आदि लेना स्वीकार भी कर लेते हैं ? या

(ग) आप जनता से हर समय कुछ रिश्वत डाली, भेंट आदि की आशा लगाए रहते हैं ?

१०—(क) आप चीजों के दाम निर्धारित रखते हैं, औरमामूली मुनाफे से संतोष करते हैं, तथा स्वयं हानि उठा कर भी कभी-कभी गरीबों को चीज़ें निर्धारित मूल्य से भी कम पर देते हैं ? या

(ख) आपको ग्राहकों की गरीबी अमीरी की चिन्ता नहीं, सब से दाम बराबर लेते हैं, हाँ नए ग्राहकों या बालकों से भी अनुचित मुनाफा नहीं लेते ? या

(ग) आपको जल्दी सेजल्दी धनवान बनने कीफिक्र रहती है, और इसलिए खूब डट कर मुनाफेखोरी करते हैं; फिर चाहे लोगों को कैसा ही आर्थिक कष्ट हो ।

पाठको को प्रति सप्ताह इस प्रकार के प्रश्नों के आधार पर अपनी नागरिकता की भावना की जाँच करते रहना चाहिए। इससे वे अपनी प्रगति का अनुमान कर सकते हैं। जो पाठक चाहें वे अपनी परिस्थिति तथा अपने गुरुजनो के परामर्श के अनुसार, प्रश्नावली को बदल लें; परन्तु परीक्षा में कड़ाई से काम लेना चाहिए, अंक देने में रियायत न करनी चाहिए, यदि आरंभ में अच्छे अंक प्राप्त न हों, परीक्षा में फेल हो जावें तो कोई घबराने की बात नहीं है; आगे और अधिक उत्साही और कर्त्तव्यपरायण होने का प्रयत्न करते रहना चाहिए।

भारतीय ग्रन्थमाला

भारतीय शासन (दसवाँ संस्करण)	...	३)
भारतीय विद्यार्थी विनोद (तीसरा सं०)	...	॥=)
हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ (आठवाँ सं०)	...	१॥)
हिन्दी में अर्थशास्त्र और राजनीति साहित्य (दूसरा स०)		२)
भारतीय सहकारिता आन्दोलन (तीसरा सं०)	...	३॥)
निर्वाचन पद्धति (पाँचवाँ सं०)	...	१)
नागरिक कहानियाँ	...	॥=)
श्रद्धाञ्जलि	...	।॥=)
राजनीति शब्दावली (तीसरा स०)	..	२॥)
नागरिक शिक्षा (छठा सं०)	...	१॥)
ब्रिटिश साम्राज्य शासन (चौथा सं०)	...	१।)
अर्थशास्त्र शब्दावली (तीसरा सं०)	...	१।॥)
कौटल्य के आर्थिक विचार (तीसरा सं०)	...	२)
अपराध चिकित्सा	...	१॥)
भारतीय अर्थशास्त्र (चौथा सं०)	...	४)
साम्राज्य और उनका पतन (दूसरा स०)	..	२॥)
मातृवन्दना (चौथा सं०)	...	॥)
देशी राज्य शासन (दूसरा सं०)	...	३॥)
विश्व-सङ्घ की ओर	...	२॥)
भावी नागरिकों से (दूसरा सं०)	...	१॥)
इंगलैंड का शासन और औद्योगिक क्रान्ति	...	१)
मनुष्य जाति की प्रगति	...	३॥)
गाँव की बात (दूसरा स०)	..	॥)
नागरिक शास्त्र (दूसरा सं०)	...	२।)
देशी राज्यों की जन-जागृति	...	५)
व्यवसाय का आदर्श	..	१)

भगवानदास केला; भारतीय ग्रन्थमाला, दारागंज, प्रयाग